॥ श्रीहरिः ॥

श्रीवल्लभविलास।

दुसरो भाग।

नाम

प्रसंग प्रकाश

बाबू ब्रजभूखन दासात्मज

ब्रजजीवन दास

गुजराती

ने

यह भाग संपुर्ण करि छपवायो।

बनारस

चन्द्रप्रभा प्रेस कम्पनी लिमिटेड

संवत १९५५।

॥ श्रीहरिः ॥

विज्ञापन पत्र ।

विदित होय कि श्रीवल्लभपदावलम्बके बल कर के वल्लभ विलास नाम ग्रंथ को प्रथम भाग जो संप्रदाय प्रकाश जब पूरो भयो तब मेरे पिता ने दूसरो भाग प्रसंग प्रकाश जामें कछु नीत वैराग को प्रसंग लिखनो प्रारंभ कियो तदनंतर भगवद इच्छासुं तीसरो भाग भजन प्रकाश और चौथो भाग सेवा प्रकाश याही ग्रंथन कूं समाप्त करि वे भगवद चरणारविन्द मो पहुंचे और दूसरो भाग प्रसंग प्रकाश अधुरो रह गयो जाकुं यह भगवज्जन दासानुदास ने गुरुवर चरणरज प्रताप तें मन मनोर्थ के उमङ्ग सुं एक से एक प्रसंग करि वल्लभविलास दुसरो भाग और पांचमो भाग या ग्रंथन कुं समाप्त कियो और यह बाल बुद्धि कि रचना यदि रसिक जन के दृष्टिगोचर में आवे और जहां कहीं अनुचित भूल चूक वाग लेखन में देखें तो मेरे अज्ञानता पर अरुचि कर मुख न फेर किन्तु आदि ते अन्त पर्यन्त प्रसंग के तात्पर्य पर ध्यान करि अपने कृपा के कान तें भूल चूक सुधार दया विचार क्षमा करेंगे ॥

दासानुदास
ब्रजजीवन दास ।
दसादिसावाल, गुजराती



को अर्थात् जा ग्रन्थन में भगवत स्वरूप और भगवत लीला इत्यादि वर्णन हैं – संस्कृत में होय अथवा भाषान्तर होय परन्तु जाको अभिप्राय श्री आचार्यन के सिद्धान्त ते विरुद्ध पायो जाय सो सत्संग जोग्य नहीं ताते अपने स्वमारगी ग्रंथन कों अवलोकन करनो बांचनो और स्वमारगी जन के संग सद्ग्रंथन को समुझनो और वाके अभिप्राय को जाननो वैष्णवन को अहर्निश सत्संग राखनो जाते अज्ञान रूपी अन्धकार नाश होय और भगवद् भक्त और भगवत स्वरूप को ज्ञान होय तब श्रद्धा भक्ती बढ़े और प्रभु अनुभव जनावे याते पुरुषोत्तम सहस्र नाम में कहे हैं। 'सत्संगज्ञानहेतुश्च श्री भागवतादि कारणं'। अर्थात् सद्ग्रंथन को सत्संग है सो ज्ञान को कारण है याते बड़ेन के किये ग्रंथन को पाठहु नित्य करनो काहे जो बड़ेन की वाणी मंत्र रूप है वाके पाठ करें ते जीव के सब दोष दूर होत हैं और भगवद् भक्ति प्राप्त होत है और भगवद् स्थल व्रज आदिक में जाय स्थल के दरशन करने बास करनो भगवदी जनते मिलि भगवत चर्चा करनी इत्यादिक यही सब सत्संग को मूल है परन्तु विशेष करके भगवत भक्तन को संग है वही सत्संग अधिकतर है काहे जो भगवान के बचन हैं जो 'जहां मेरे भक्त हैं वहीं हम रहत हैं और हमारे भक्तन को हृदय है वही हमारो स्थान है' याते भगवद् भक्तहु भगवत समान हैं इनके सत्संग ते सब बांछित पदार्थ प्राप्त होत है –

॥ श्लोक ॥

गङ्गा पापं शशी तापं दैन्यं कल्पतरुर्हरेत्।
पापं तापं तथा दैन्यं सधः साधुसमागमे॥१॥

अर्थात् गंगा पाप को हरण करे है, चन्द्रमा ताप को शान्त करे है और कल्प वृक्ष दलिद्र को हरे है परन्तु भगवद् भक्त के सत्संग ते तत्काल पाप ताप दलिद्र सब दूर होत है। और जप तप योग नेम धर्म व्रत इत्यादि साधन ते भगवत प्राप्ति अति दुर्घट है और भगवद् जन के सत्संग करके अति सुगम है– यह वृत्तान्त प्रचेता और नारद जी की कथा जो भागवत में लिखी है याते अच्छी प्रकार स्पष्ट है और अन्य साधन ते अनुक्षण मनुष्य को मन भगवत में नहीं लगै संसार के स्वाद में जाय फसे है और भगवद् भक्त के सत्संग ते भगवत चर्चा, भगवद्गुणानुवाद, भगवत सेवा कीर्तन भजन इत्यादिक में मन लग्यो रहे है, कोई समय चित्त अन्यत्र ह्व जाय तो फेर भगवत के सन्मुख हो जाय है, श्री भागवत नवम स्कन्ध में पहिले श्री शुकदेव जी ने सब भगवद् भक्त राजान की कथा कही जाके श्रवण ते भगवद् भक्ति की योग्यता होय पाछे दसम स्कन्ध में साक्षात ठाकुर जी की लीला वर्णन करी अतेव प्रथम सत्संग अवश्य है जानकी जी के खोज में हनुमान जी जब लंका में गये तब हनुमान जी के सत्संगते बिभीषण को भक्ति प्राप्त भई– नारद जी नल कुवरमणी ग्रीवधन के मध करके अनीत करत हते सो श्राप दियो परन्तु नारद जी भगवद् भक्त हते सो इनके क्षण भर सत्संग के प्रभाव ते व्रज में जमला अर्जुन वृक्ष भये और भगवान ने दर्शन दे इनको उद्धार कियो– नारद, व्यास, ध्रुव, प्रह्लाद, प्रचेता, अजामिल आदिक सब को सत्संग के प्रभाव ते भगवान मिले हैं, उद्धव जी व्रज भक्तन के सत्संग कर ज्ञान को भुलाय भगवद् भक्ती को प्राप्त भये सो सत्संग सर्व काल में वर्तमान है

पर यह अपनी कुतर्क वो कुचेष्टा है कि सूझ नहीं पड़े कारण यह है जो अपने में दोष भरे हैं वोही सूझ पड़े हैं द्वारकेश जी ने गायो है। भगवदी जान सत्संग कों अनुसरे न देखि दोष अरु सत्य भाषि सो भगवद् भक्तन के दोष पर दृष्टी नहीं राखनी उनमें जो असाधारन भगवद्धर्म है ताको देखनो चहिये और ऐसे मनुष्य तन पाय जगत में निर्दोष कौन हैं और महाभारत में भगवत बचन हैं कि जो कोई भगवद् भक्तन में जाति आदि को विभेद करिके उनकी सेवा नहीं करें वे नास्तिक हैं सो सत्संग के मारग में यह पांच ठग हैं जाति गर्व, विद्या गर्व, धन और ऐश्वर्य को गर्व, रूप गर्व, बल गर्व सो इन गर्वन को दूर कर सत्संग के खोज में लगे तो अवश्य भगवान कृपा करि सत्संग मिलाय ही देत है काहे ते जो पुराण आदिक सब जगे भगवान के बचन हैं 'जाको मेरे भक्तन के विषे भक्ति है वे मेरेही भक्त हैं उनके सकल मनोरथ मैं पूरण करो हौं और जो मेरे भक्तन के द्वेषी हैं उनको मैं नाश करूं हौं' 'जैसे हरनाकस, रावण, दुर्योधन, कंस आदिक' भगवद् भक्तन तें बैर ठान उनको दुख दियो सो नष्टता को ही प्राप्त भये, ताते भगवद् भक्तन में श्रद्धा भक्ति पूर्वक विश्वास राखि सत्संग करे तो यह जीव संसार के दुखतें छुट निःसंदेह उत्तम गती और परम पदवी को प्राप्त होय याही प्रकार पुष्टि मारग में श्री यमुना जी को संग करके गंगा जी हु भगवान की प्यारी भई सो श्री यमुनाष्टक में कहे हैं –

॥ श्लोक ॥

यया चरण पद्मजा मुररिपो प्रियंभावुका।
समागमनतो भवत्सकल सिद्धिदासेविताम्॥

और चौरासी और दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता प्रसिद्ध ही है जो दामोदर दास जी कृष्णदास जी सूरदास जी चाचा हरिवंश जी नंद दास जी गोविंद स्वामी जी आदि भगवदीन के सत्संग के प्रभाव ते लक्षावधि जीव संसार ते छुटि भगवत की पुष्टि लीला में प्राप्त भये सो उत्तम भक्तन के संग ते उत्तमता को पहुंचे हैं या प्रकार भगवद भक्त और सत् ग्रंथन को अवलोकन यही सत्संग है —

॥ श्लोक ॥

पुन्यांभोधिभवातमोविघटनी
सत्संगमूलोत्तमा ।
श्रद्धापल्लविनीविरक्तिकलिका
प्रेमप्रसूनोज्वला ॥
सान्द्रानंदसुखवहा च परम
ध्यानं विभूतिपरा ।
सेयं श्रीहरिभक्तिकल्पलतिका
भूयात्सतांप्रीतये ॥१॥

हरि भक्ति रूपी जो कल्पलता पुन्यरूपी समुद्र में उत्पन्न अज्ञान रूपी अन्धकार को नाश करवेवारी सत्संग है मूल जाको और श्रद्धा है पल्लव जामें और विरक्ति है कली जाकी प्रेम रूपी फूल तें सोभायमान आनंद को है झकोर जामें ध्यान है ऐश्वर्य जाको सो भगवद भक्त के प्रीत को संतोष

करवैवारी होय ॥ १ ॥ ताते हे मन तू इधर उधर क्यों भटके और दुख पावे है, भगवदीन के सत्संग में जाय लग जाते उत्तमता और आनंद को प्राप्त हो ॥

॥ प्रसंग ३ कुसंग के विषय में ॥

कुसंग रूपी एक ऐसी काजल की कोठरी है जो यामें गयो ताको अनेक दुःख रूपी दाग लगेई है और यह एक ऐसी विकराल नदी है जो याके भवर में पड्यो सो रसातल को मिलई जाय है और यामें ऐसे भयंकर ग्राह अर्थात् मगर हैं जो जीव तेहि निगल वाको जन्मारो व्यर्थ करि संसार ते मिटाय डारे हैं और यह कुसंग रूपी एक ऐसो विष को झाड़ है जो याके नीचे बैठ्यो ताको दुर्व्यसन रूपी कांटा और दुर्दसा रूपी फल की प्राप्ति होत ही है ॥

चोरी करी मार पड़ी मुसुक बंधवायो सो लाभ पायो ।
जूवा खिल्यो धन गंवायो जूती पैजार को नफ़ा कमायो ॥
मद्य पीयो बुद्ध गंवायो गिरतो पड़तो लोक हंसायो ।
वेश्या के गयो कुल डुबोयो रोग लाय घर में पड्यो ॥
झूठ बोल इतबार खोयो संत में लबार भयो ॥

॥ दोहा ॥

करि कुसंग चाहत कुसल,
तुलसी मन अपसोस ।
महिमा घटी समुद्र की,
रावन बसो पड़ोस ॥

सो यह ऊपर लिखे दुर्व्यसन रूपी कुसंग बड़े बड़े महंत लोगन कों भी दुख को कारण भयो है। ब्रह्मा जी ने बछरा चोराये सो भगवान के आगे लज्जित भये, राजा युधिष्ठिर ने जूवा खेल्यो सो अपनो सब राज्य गंवायो जादवन ने मद्यपान कियो सो सर्व अपनो कुटुम्ब नसायो, शृङ्गी ऋषी को वेश्या ने मोही सो सब अपनी तपस्या खोई, गैया ऐसी पवित्र और पूजनीय सो झूठ साखि भर अपने उत्तमांग मुख को अपवित्र कियो ताते श्राप पाय कलि में उच्छिष्ट खाय है सो झूठ को बोलनो ऐसो महापातक है, कार्तिक महात्म में विष्णु ब्रह्मा के संवाद में याकी कथा सब वर्णन है और सब कथा पुराणादिक में प्रसिद्ध ही है यामें विशेष प्रमाण कहा चहिये याको तो लौकिक में हु सब को प्रत्यक्ष अनुभव है याते मनुष्य को कुसंग के बयार ते बचनो याके निकट कदापि नहीं जानो यही अपने कुशलता को हेतु और बुद्धिवानी को काम है, जैसे अमृत रूप शुद्ध जल में एक बूंद मद्य मिले तो सब जल बिगड़ जाय तैसो कुसंग है और कच्चो घट अग्नि के संग ते रस धरबे जोग होत है सो सत्संग है॥

॥ दोहा ॥

होत सुसंगति सहज सुख,
दुख कुसंग के थान।
गंधी और लोहार की,
बैठो देखि दुकान ॥१॥

सो यह जीव जैसी संगति में प्रवर्त होय है वैसोही वाको फल प्राप्त होय है। गीता में भगवान के वाक्य हैं—

॥ श्लोक ॥

ध्यायतो विषयान् पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायतेकामःकामात्क्रोधोभिजायते॥
क्रोधाद्भवतिसंमोहःसंमोहात्स्मृतिविभ्रमः
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशोबुद्धिनाशाद्विनश्यति।

ताते भगवद् संबंध बिना सब कुसंगही है। सो संग के दोय भेद हैं सत्संग और कुसंग सो मनुष्य जैसो संग करे है वैसी दसा कों प्राप्त होय है जैसे हवा दुर्गंध को संग करि चले है तो घिणा जोग्य और दुखदाई होत है और पुष्पादिक सुगंधित वस्तु के संग करके प्रसंसनीय और सबकों सुखदाई है तैसे यह मनुष्य संसारिक विषयादि कुसंग करके अनेक दुख भोगे है और निंदनीय होत है और सत्संग करके सबको सुखदाई और आप आनंद कों प्राप्त होत है ताते हे भगवज्जन या दास कोहु व्यासंग के बयार ते बचाइयो॥

॥ प्रसंग ४ अभिमान गर्व आदि के विषय में॥

अभिमान गर्व अहंकार दर्प मद घमंड आदि एकही पर्य्याय शब्द है कुछ सूक्ष्म इनके अर्थ में भेद है परन्तु अभिप्राय तात्पर्य अन्त में एकही जाननो चहिये जैसे भगवत कों कर्ता न जान अपने को जाननो की यह हमने पराक्रमते कियो सो अहंकार और भगवत की सता न जान अपने को जानना

जो यह मैं हूं और यह राज्य और धन और लड़का स्त्री इत्यादिक सब मेरोही है सो अभिमान और मैं सबते बड़ो हों और सब मेरे आधीन है और सर्व प्रकार अपने में बडप्पन जाननो सो गर्व है सो इत्यादिक सब अभिमान ही के भेद हैं कोई प्रकार को अभिमान होय धन को, राज्य को, ऐश्वर्य को, बल को, रूप को, विद्या को अभिमान मात्र भगवान को अप्रिय है काहु को अभिमान प्रभु राखे नहीं और अपने भक्तन में नेक अभिमान आयो देख तुरत उनमें ते अभिमान को दूरही कर देत है और जो भगवत भक्त नहीं हैं सो अभिमान ही में नष्टता को प्राप्त होत हैं रास पंचाध्याई में व्रज भक्तन को नेक अभिमान आयो जो मो समान कोऊ नहीं हमने त्रिलोकी पति भगवान को अपने बस कर लियो है सो तत्क्षण भगवान अन्तर ध्यान होय गये सो रास पंचाध्याई में वर्णन है जब दीनता कर रुदन कियो तब तत्काल आय दर्शन दिये दोय सौ बावन वैष्णव की वार्ता में प्रसंग है जो नारायन दास जी को धन को अभिमान आयो सो धनहु जातो रह्यो और प्रभु अप्रसन्न भये अर्जुन को अपने बान विद्या को बड़ो अभिमान रह्यो सो भिलन सो बान विद्या में अर्जुन को हराय या अभिमान को मिटायो हनुमान ज़ी को अपने बल को अभिमान भयो जो संजीवनी बूटी लेवे गये और पर्वत समेत ले चले सो भरथ जी ने बान पर बैठाय लंका पहुंचायो याते इनको बल को अभिमान दूर भयो नारद जी को रूप को अभिमान सो बांदर को मुख दे अभिमान मिटायो या प्रकार देवतान कोहु अभिमान वो अहंकार भगवान राखे नहीं तो जीवन की कहा चली है

सो पुष्टि मारग के इस मर्म में एक दीनताहु मर्म है और या जीवते अनेक अपराधहु बने है सो दीनताही किये प्रभु क्षमा करें हैं याहीते दीनानाथ भगवान को नाम है सो दीनता ऐसी वस्तु है जाते लौकिक में सब जन प्रीत राखे हैं और श्री ठाकुरजीहु कृपा करत हैं और भगवद भक्तन कोहु वापर अनुग्रह रहत है सो दीनता राखे सब उत्तमही होत है एक पंडित सों एक ने पूछ्यो कि एक वस्तु ऐसी बतावो जासों लौकिक अलौकिक दोउ बने पंडित ने उत्तर दियो दीनता सो दीनता ऐसी वस्तु है । अभिमान ते विरुद्व दीनता – और दीनता ते विरुद्व अभिमान है—अभिमान करके रावण को सर्वनाश भयो दीनता करके विभीषण ने राज पायो दुर्योधन को अभिमानी देख भगवान ने वाको मेवा त्याग दियो और विदुर जी की दीनता ते भाजी अङ्गीकार करी सो दीनता कहा जो अपने को असमर्थ और तुच्छ जान गदगद कंठ और नेत्रन में अश्रु आन शुद्व हृदय ते दास भाव करके प्रभुनते रहनो तो निःसंदेह वा जीव को प्रभु अपनो कर लेत है और सर्व प्रकार वाको उत्तम ही करत है और दीनता और नम्रता में कछु तारतम्य है दीनता केवल भगवत संबंधी है नम्रता लोक संबंधीहु है । ताते जीव को दीनता ही ते विनय पूर्वक प्रभुन के आगे रहनो ही उचित है। बंचनामृत को –

॥ श्लोक ॥

चित्तेन दुष्टो वचसापि दुष्टः
काये‍न दुष्टः क्रिययापि दुष्टः ।

ज्ञानेन दुष्टो भजनेन दुष्टो
ममापराधः कतिधा विचार्यः ॥१॥

हे प्रभुनाथ मैं चित्त करके दुष्ट हों बचन करके दुष्ट हों ज्ञान करके दुष्ट हों भजन करके दुष्ट हों अर्थात् भजन भी नहीं बनें और काया करके दुष्ट हों कर्म करके दुष्ट हों सो मेरे अपराध को आप कहांताईं विचारेंगे ॥ १ ॥ और भगवान को नाम दीन बंधु और दीनदयाल इत्यादिक सर्वत्र प्रसिद्ध ही है गजेंद्र को जल में जब ग्राह ने पकड़्यो तब गजेंद्र ने बहुत बल कियो परन्तु कछु बस न चल्यो तब हारि के दीन होय सर्वोपर श्री ठाकुर जी कों पुकार्यौ सो तत्काल नंगे पावन ते दौड़े और गरुड़ पर सवारहु न भये याते जो विलंब होयगो गजेन्द्र के पुकार के संगही पहुंचे ग्राहते छोड़ाये रक्षा करी द्रौपति को सभा में चीर उतारत कोई सहाय न भयो तब दीन होय भगवत को स्मरण कियो सो वाही समय चीर बढ़ाय लज्जा राखी, अजामील जमदूतन के भयते दीनता करके नारायण अपने पुत्र को पुकार्यो यद्यपि अजामील महापापी और घोर नरक को अधिकारी रह्यौ परंतु अन्त में दीनता पुर्वक वाके मुख ते भगवत नाम निकर्यौ और पुकार्यौ तो वाने अपने पुत्र को पर भगवत को दीन के उद्धार करवे को प्रण है ताते दीनोद्धारण ने अपनी ओर मान लियो और वाको उत्तम गति दियो सो श्री ठाकुर जी दीन बंधु हैं जो दीनता करि स्मरण करेहै ताकी बंधु अर्थात् भ्राता तथा मीत्र की नाईं सहायता करके वाको सब संकठ दूर करत हैं ऐसो दीनता को प्रभाव है याते जीव को भगवत ते

और भगवद् भक्तन ते सर्वदा दीनताही राखे भली है सो तू दास कहावे है तौ दास भावते रहि सर्वदा प्रभुन के आगे दीनताई को आचरण कर ॥

॥ प्रसंग ६ जात अभिमान के विषय में ॥

मनुष्य को अपने जात को हमता करनो कि हम बड़े उत्तम वर्ण और जात के हैं या घमंड के आगे दूसरे के उत्तम कृत्त और सद् आचरण और गुण के उपर दृष्टी न करके वाको नहीं माननो और वाकी न्यूनता कर देनी यह बड़ी भूल और मूर्खताई को काम है जात अभिमान राखे कछु प्रयोजन सिद्धि नहीं केवल भ्रम मात्र है और भगवद् भक्तन के आगे अपने जात को अहंकार करके अपने को सब ते बड़ो माननो यह सर्वथा बाधकही है चाहि सो जात होय भगवत परायण होय सो सबते बड़ो और उत्तम है कछु उत्तम कुल में जन्म होयवे तेही बड़ाई नहीं श्री भागवत सप्तम स्कंध में कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

विप्राद्द्विषड्गुणयुतादरविन्दनाभ
पादारविन्दविमुखाच्छ्वपचंवरिष्ठम् ।
मन्येतदर्पितमनोवचनेहितार्थप्राणं
पुनातिसकुलंनतुभूरिमानः ॥

अर्थ – षट कर्म करवे वारो ब्राह्मण जो भगवद् चरणारविन्द ते विमुख है वाते भगवान में जाने मन बचन अभिष्ट धन और

प्राण अर्पण कर दिये हैं ऐसो चंडाल को श्रेष्ट मानत हो काहे जो ऐसो पुरुष सब कुल को पवित्र करता है नतु भगवद् भक्ति रहित बड़े प्रतिष्ठा वाले ब्राह्मण को ऐसो प्रह्लाद जी भगवान ते कहत हैं और द्वारका महात्म में बली के संबाद में कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

संकीर्णयोनयःपूतायेभक्तामधुसूदने ।
म्लेच्छतुल्याःकुलीनास्तेयेनभक्ताजनार्दने१॥

वर्ण संकर जाति में उत्पन्न होय जो भगवद् भक्त है सो पवित्र है परन्तु उत्तम कुल में जन्म ले भगवद् भक्त नहीं सो म्लेच्छ समान है ॥ १ ॥ औरहु आदि पुराण में ॥

॥ श्लोक ॥

नामयुक्ताजनाःकेचिज्जात्यंतरसमन्विताः
कुर्वन्तिमेयथाप्रीतिंनतथावेदपारगाः ॥ १ ॥

जो नीच जात में उत्पन्न भगवत नाम स्मरण करवे वारो जैसी मेरी प्रीत करत है तैसी केवल वेद पारंगत नहीं करि सकत है ॥ १ ॥ जैमिनि भारथ में कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

नशूद्राभगवद्भक्तास्तेपिभागवतोत्तमाः ।
सर्ववर्णेषुतेशूद्रायेनभक्ताजनार्दने ॥ १ ॥

भगवान का भक्त शूद्र भी होय तो वह शूद्र नहीं है वह

बैष्णव अर्थात् उत्तम है और चारो वर्ण में जो भगवद् भक्त नहीं है सोई शूद्र है ॥ और पद्म पुराण में कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

शूद्रंवाभगवद्भक्तंनिषादंश्वपचंतथा ।
वीक्षतेजातिसामान्यंसयातिनरकंध्रुवम्॥१॥

शूद्र अथवा भील वा चंडाल जो भगवद्भक्त हो उनको जो नीच समझें हैं सो नरक में जात हैं ॥ और ह्व बचनामृत को

॥ दोहा ॥

चार वरण मिलि हरि भजे ।
एक वरन होय जात ॥
सप्त धात पारस मिले,
एकहि भाव बिकात ॥१॥

और अष्ट छाप के कीर्तन में परमानंद दास जी ने गायो है ॥

कहा भयो उत्तम कुल जनमें,
जो हरि सेवा नाहीं ।
सोई कुलीन दास परमानंद,
जो हरि सन्मुख जांही ॥

गोपी प्रेम की ध्वजा । सो उत्तम कुल तथा वर्ण में उत्पन्न भयेते कछु पुरुषार्थ नहीं श्री ठाकुर जी सेवा भक्तिही ते प्रसन्न

होत हैं याही में मुख्यता है 'जात पांत पूछे नहिं कोय। हरि को भजे सो हरि को होय'। औरहु शास्त्रन में सब प्रसिद्ध है जो बालमीक रीषीश्वर स्वपच जात के रहे व्यासोम त्मोदरीय व्यास जी मल्लाहिन के पेट ते उत्पन्न भये अगस्तो कुंभ संभवा अगस्त जी कूंभ ते भये वेश्या पुत्रो वशिष्टो वशिष्ट जी वेश्या ते भये पांडव वोजार जाता पांडव लोग जारतें परन्तु ये लोग भगवद् भक्ति के प्रभावते भगवद्हंस और ऋषीन में सिरोमणी भये और हरनाकस और हिरण कश्यप कश्यप ऋषी के पुत्र और रावनादिक पुलस्त ऋषी के पुत्र इत्यादिक दुष्टाचरण ते असुर कहाये जो अधापि प्रातःकाल कोई इनको नाम नहीं लेत हैं ताते कह्यो है॥

साधु की जाति मत पूछो जब पूछो तब ज्ञान।
मोल करो तरवार को पड़ी रहन दो म्यान॥

औरहु भक्तमाल में सब की कथा प्रसिद्ध ही है जाने जात को अभिमान करके भक्तन को अनादर कियो सो लघुता को पाये और लज्जित भये तहां तुलसी दासहू कह्यो जो 'जातन के अभिमान ते बूड़े सकल कूलीन' औरहु सूत पौराणिक जात में ऋषीन ते नीचे रहे परन्तु नीमशारण्य में अठासी हजार ऋषीश्वर सूत जी को ऊंचो आसन दे भगवत कथा उनते श्रवण किये औरहु जाति अभिमान राखे ते अन्तः करण में दासत्व भाव नहीं आवे सो हम भगवत प्राप्ति में बाधक हैं ताते जात को अभिमान और अहंकार छोड़ भगवत चरनार बिन्द भक्ति के सौभाग्य को मध राखिही सब कल्याण है॥

॥ प्रसंग ७ नम्रता के विषय में ॥

जिनको नम्र सुभाव है सो वे स्वदेश परदेश जहां रहें जहां जायं सर्वत्र सब लोग वाके मित्र हो जायं हैं प्रायः वाके शत्रु नहीं होय सज्जन और बड़े लोग वापर कृपा करत हैं और राजनीत में कह्यो है। 'रिपुंनयवलैकुर्य्याद्वशं' शत्रुकोहु नम्रता करके वश्य करलेत है औरहु ॥

॥ श्लोक ॥

नमन्तिफलिनोवृक्षानमन्तिगुणिनोजनाः।
शुष्कंकाष्ठं च मूर्खश्चननमन्तिकदाचन॥१॥

अर्थात फलवान वृक्ष और गुणिजन जो हैं सो नम्रही रहत हैं। सूखो काठ को लकड़ और मूर्ख जन ये कदापि नहीं नमे औरहु ॥

॥ श्लोक ॥

अहोवतविचित्राणिचरितानिमहात्मनाम्।
लक्ष्मीतृणवमन्यन्तेतद्भारेणनमन्तिच॥१॥

अर्थात् देखो महत यानि श्रेष्ट पुरुषन के कैसे अद्भुत चरित्र हैं कि लक्ष्मी को तृण समान जाने हैं और लक्ष्मी के बोझ करके औरहु नम्र होय जायं हैं अर्थात् उनको लक्ष्मी प्राप्त होवेते अहंकार नहीं होय औरहु नम्रता सो रहत हैं। सो गुणवान, धनवान, विद्यावान, कुलवान, बलवान इत्यादि पुरुषन की नम्रता करके औरहु अधिक शोभा बढ़ जाय है जैसे फल वान वृक्ष जो होय है सो झुकत ही रहत है तैसे मनुष्य जो

गुणवान है सो नम्रताही सो रहत हैं और सूखो ठूंठ नहीं झुके तैसे मूर्ख जनहु अपने टेट करके अहंकार सो भरे कदापि नम्रता सो नहीं रहैं जैसे बगीचा में अनेक वृक्ष होय है पर सरो के वृक्ष बिना बाग की सोभा नहीं या प्रकार मनुष्य में सब गुण होय पर नम्रता नहीं तो वाकी सोभा नहीं सरो के वृक्ष में झुकनो यह सुभाविक धर्म है ताते सोभा अधिक होत है ॥

॥ दोहा ॥

तुलसी नवे सो आप को परको नवे न कोय।
डांड तराजू तौलिए नवे सो गरुवा होय॥

और धनुष्यवान है सो धनुष्य नम्रता सों रहत है वाको लोग अपने हाथ और छाती ते लगाय राखत हैं और बान में नम्रता नहीं तो ताको लोग छोड़ देत हैं अर्थात् बान को अपने पास तें त्याग शत्रु के हवाले करत हैं अथवा राखत हैं तो पीठ के पीछाड़ी राखत हैं सो नम्रता में ऐसे गुण हैं नम्रता सात्विक प्रकृति को धर्म है और अहंकार तामसी को धर्म है सो भगवत भक्त हैं सो सात्विकही होत हैं इन में नम्रता सुभाविकई है सो नम्र सुभाव राखे लौकिक अलौकिक सर्वत्रही लाभ है याते जीव तो को भी नम्रताई में भलाई है ॥

॥ प्रसंग ८ विषयाशक्त और कामी के विषय में ॥

सन्यास निर्णय ग्रन्थ में श्री महा प्रभुन के वाक्य हैं ॥

बिषयाक्रांतदेहानांनावेशःसर्वथाहरेः ।

अर्थात् जो जन विषयाशक्त हैं तिनके हृदय में हरि जो भगवान सो कबहु नहीं आवें। विषयाशक्त कहा जो इंद्रिन के बस होय नाना प्रकार लौकिक सुख के भोग में सदा मग्न होय रहे हैं जिभ्या करके भांति भांति के पकवान के स्वाद में जिनकी रुचि लगी है। नासिका ते अनेक पुष्प अतर फुलेल आदिक सुगंध की चाहना में भरे रहत हैं। नेत्रन तें नाच रंग तमाशा देखबे में तत्पर बने हैं कानन ते राग रागिनी वाजिंत्र किस्सा कहानी झूठी गप शप में मन लोभाय रह्यो है। शरीर के सुख के लिये मखमली बिछौना और छप्पर खाट की खोज है या बिना निंद नहीं आवे हाथन को चौपड़ गंजीफा शतरंज के खेल में लगाय अति प्रसन्न हैं। ऐसेही कामी को कामिनी के कामना के काम में अहर्निशमनो कामना लगी रहत है सर्व इन्द्री करके कामिनीही के भोग बिलास की आकांक्षा में विक्षिप्त बने रहत हैं पर यह नहीं बिचारें जो यह क्षणिक और तुच्छ सुख में पड़ करके अपने बड़े पदार्थ की हानि करें हैं और अलौकिक परमानंद को भुलाय नरकानुगामी हो विषयानंद में लोभाय रहे हैं ॥

॥ श्लोक ॥

पतङ्ग मातङ्ग कुरङ्ग भृङ्ग
मीनाहताःपञ्चभिरेवपञ्च
एकःप्रमादीसकथंनहन्यते
यःसेवतेपञ्चभिरेवपञ्च ॥१॥

अर्थ पतंगा नेत्र के स्वाद करके दीपक में जर नष्ट हो जाय हैं हाथी सब जीवन में बलवान और बड़ो सो हथनी के पीछे मैथुन के स्वाद करके मनुष्य के बस होय बंधन में पड़े है मृगा कान के स्वाद करके रागन में मोहित होय मनुष्यन के हाथ सों बंधाय जाय है भंवरा नासिका के स्वाद में सुगंद के कारण कमल आदिक पुष्पन में बंध जाय हैं मछली जिम्भ्या के स्वाद ते जाल में फसके अपने को नष्ट करे है और जो जीव पांचों इंद्रिन के स्वाद के विषय में बस होय रहे हैं सो वे न जाने कौन गती को पावेंगे ॥ १ ॥ ताते लौकिक विषय बासना ते मन को सर्वथा रोकनोई चहिये विषयादिक जगत में बड़ो प्रबल है जैसे या श्लोक में कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

भिक्षाशनं तदपि नीरसमेकवारं
शय्या च भूः परिजनो निज देहमात्रम्।
वस्त्रं च जीर्णशतखण्डमलीनकन्था
हाहा तथापि विषयानपरित्यजन्ति ॥१॥

अर्थ – भिक्षा मांग के निरस अन्न एक बेर खाय के रहत है और भूमी पर सोवत है कुटुम्ब उनको केवल देही मात्र है पुराने वस्त्रन ते सौटुक जोड़ गुदड़ी पहीरे है ऐसी दसा में प्राप्त है तोहु उनते विषय बासना नहीं छुटे है यह बड़ो आश्चर्ज है ॥ १ ॥

॥ श्लोक ॥

नसंसारोत्पन्नंचरित मनुपश्यामिकुशलं ।

विपाकःपुण्यानांजनयतिभयंमेविमृशतः ॥
महद्भिःपुण्यौघैश्चिचपरिगृहीताश्चविषया ।
महान्तोजायन्तेव्यसनमिवदातुंविषयिणाम् ।

संसारिक उत्पन्न चरित्र में हम कुशल नहीं देखे हैं और पुण्यफल स्वर्गादि के विचार ते भयदायकही देख पड़े हैं अर्थात् पुण्य क्षय होवे ते वहां तेहु पतन होय है और बहुत दिन पर्यन्त पुण्य के समूह ते या लोक में जो विषयादि संचित कयौ है सोहु विषयाशक्तन को अन्त समय दुखदायक ही है ॥ १ ॥ और ऐसेही कामी लोग अपने धन यौवन को छिन के पीछे नष्ट कर आपत्ति में पड़े हैं जैसे कह्यो है— कामातुरानां न भयो न लज्जा ॥

॥ श्लोक ॥

वेश्यासौ मदनज्वाला रूपेन्धनसमेधिता ।
कामिभिर्यत्रहूयन्तेयौवनानिधनानिच ॥

अर्थात् वेश्या रूपी काम की ज्वाला जो रूप को ईंधन करके जुक्त है वामें कामी लोग अपने जोबन और धन को होम करे हैं अर्थात् जराय देत हैं ताते कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

दर्शनात् हरतेचित्तंस्पर्शनात् हरतेबलम् ।
संगमात् हरते वीर्यं नारी प्रत्यक्ष राक्षसी ॥

अर्थात् जाके देखतेही चित्त हरण होय जाय है और

स्पर्श करे तें बल घट जाय है और संग करके वीर्य नष्ट होय है याते नारी जो है सो प्रत्यच्छ राच्छसी है मनुष्य की सर्व प्रकार हानिही करे है सो इन बिभिचारिणी और वेश्या स्त्रीन के संग करके विषयाशक्त होय मनुष्य पाछे पश्चाताप करत है ॥

॥ श्लोक ॥

दुर्म्मन्त्रिणं कमुपयान्तिननीतिदोषाः
संतापयन्तिकमपथ्यभुजंनरोगाः
कंश्रीर्नदर्पयति कंननिहन्तिमृत्युः
कंस्त्रीकृतानविषयाननुतापयन्ति ॥१॥

अर्थ – ऐसो कौन दुष्ट मंत्री हो करके जाको नीतिदोष न प्राप्त भयो, कुपथ करवे वारो ऐसो कौन है जाको रोग ने न सतायो, ऐसो कौन पुरुष जाको लच्मी प्राप्त भये ते अहं-कार न आयो और ऐसो पुरुष कौन जो स्त्रिकृत विषय में पड़ फेर पश्चाताप नहीं कियो और मृतु ने कौन को नहीं मार्यो याते कह्यो है।

॥ श्लोक ॥

नास्ति कामसमो व्याधिर्नमोहस्यसमोरिपुः।
नास्तिक्रोधसमोवन्हिर्नज्ञानात्परमंसुखम्॥

अर्थात् काम के समान व्याधि नहीं मोह के समान शत्रु नहीं क्रोध के समान अग्नि नहीं और ज्ञान से अधिक सुख नहीं ताते पुरुषार्थी वही पुरुष है जो लौकिक विषय वासना

के सुख को त्याग अपनी इंद्रिन को दमन कर भगवत की ओर लगाय देत है और भगवत चर्चा और भगवत सेवा भजन के विषैही सदा प्रसन्न रहत है इन्द्रादिक देवता काम के बस होय दुखही को प्राप्त भये बृहस्पति जी की स्त्री तारा और गौतम जी की स्त्री अहिल्या के पास इन्द्र और चन्द्रमा जाय गमन कियो सो इन्द्र को सर्व शरीर भगाकार होय गयो चंद्रमा को क्षय रोग लग्यो सो सब यद्यापिताई बन्यो है याते कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

धनेनकिंयोनददातियाचके ।
वलेनकिंयश्चरिपुंनवाधते ॥
श्रुतेनकिंयोनचधर्म्ममाचरेत् ।
किमात्मनायोनजितेंद्रियोभवेत्॥१॥

अर्थात् सो धन काहा जो याचकन को न दियो, सो बल कहा जाते शत्रु को न जीत्यो, सो श्रवण कहा जो सुनि के धर्म अचरन नहीं कियो, सो पुरुष कहा जो इन्द्रिन को न जीत्यो ॥ १ ॥ सो जो जन संसारिक विषय वासना में ही भूल रहे हैं उनको कदापि निस्तारो नहीं तनक सुख के लिये अपने सर्वस्व अलौकिक आनंद की हानि करें हैं और जन्म २ पर्यन्त दुःखही भोगवो करे हैं जैसे एक अन्धेरे कूप में मनुष्य पड़्यो एक दूब जो घास के सदृश होय है वाको थांभि लटक रह्यो है और ऊपर वाके एक वृक्ष में सहत को छाता लग्यो है वामें ते बूंद बूंद सहत याके मुख में टपके है

वा लालच में मुंह पसारे कूपही में पड़्यो लटके है वांते बाहर नहीं निकले और जा दूब को पकड़ी है वाको दोय चूहा काट रहे हैं जो गिरे तो नीचे विक्राल सर्प मूंह पसारे बैठ्यो है ज्यों दूब टूटतही तुरंत सर्प के मोढे में जाय नष्ट होय याही प्रकार मनुष्य या संसार रूपी कूप अज्ञानता रूपी अन्धकार में पड़्यो दूब रूपी आयुश जाको रात और दिन रूपी दोय चूहा काट रहे हैं वाको पकड़ लटक रह्यो है परन्तु वा सहत रूपी संसारिक विषय की वासना के लालच को त्याग कर भगवत भजन में जो प्रीत करे तो वा कूप ते बाहर हो जाय और चौरासी लाख जोईन रूपी सर्प के मोढे में पड़बे ते बचे और सर्वदा भगवत आनंद में अविचल और निर्भय सुख की प्राप्ति होय। यदि येही इन्द्रिन के विषय को सब भगवत संबंध में मनुष्य लगावे तो निर्भय होय कर अलौकिक आनंद और सुख को प्राप्त हो जाय। सो सब इन्द्रिन को राजा मन है मन लगे तो सबही लग जाय और भगवत प्रसादी वस्तु अपने विनि योग में ल्यावे इन्द्रिन को विषय भगवद अर्थ बिचारे जैसे सुगंध आदिक लगावे तो मन ते यह जाने जो श्री ठाकुर जी की सेवा तथा सत्संग में जानो है जामें मेरे शरीर ते दुर्गंध न आवे याते बीड़ा लाची खाय और मलीन वस्त्रहु न पहिरे ऐसे ही कान को स्वाद भगवत कीर्तन भजन कविता जामें भगवत यश वर्णन होय वाही के सुनबे को सुख माने नेचन ते प्रभुन के वैभव की रचना कर और शृङ्गारादिक की छवि निरख मगन होय और भगवत लीला रासादिक देखवे में चाहना राखे जिभ्या को स्वाद भगवत प्रसाद करि सन्तुष्ट होय और मैथुन अपने स्त्रि

के संग करि यह विचारे जो संतत होयगी तो भगवत सेवा भजन करेगी और काम वासनाहू मन ते दूर होय शुद्ध मन ते भगवत सेवा भजन बनेगो या प्रकार मानते बिचरत रहे तो भगवत में निरोध हो जाय और लौकिक अलौकिक दोहु जगे सर्वदा सुख की प्राप्ति होय ताते हे मन मेरो तू विषय को कीड़ा मत हो मधुकर होय भगवत चरण कमल के पराग की सुगंध ले ॥

॥ प्रसंग ९ इन्द्रिन को निग्रह और वैराग्य ॥

जब सुन्दर स्वरूपवान स्त्रिन को देख काम करके मोह उत्पन्न होय तब वा समय मनुष्य को यह बिचारनो चहिये जो श्री ठाकुर जी को स्वरूप कोटि कंदर्प लावण्य जिन्हों ने काम देवहु को जीत लियो है और व्रज सुन्दरी जिनके स्वरूप समान सुन्दर कोई तीन लोक में नहीं सोहु जिनको स्वरूप देख लोभाय आसक्त भईं और जिनकी मोहनी सूरत देख शिवादिक ऐसे योगीश्वर और लक्ष्मी जी मोहि गये सो ऐसे सुन्दर स्वरूपवान अपने प्रभुन को छोड़ि केवल मांस रुधिर की जो पूतरी जामें बुढापा तथा मृत्यु को भय सदा लग्यो है सो तुच्छ पदार्थ में कहा मन लगाय आसक्त होनो जाको रूप विचार कर देखो तो ग्लानिही को कारण है जैसे ॥

॥ श्लोक ॥

स्तनौमांसग्रन्थीकनककलशावित्युपमितौ ।
मुखंश्लेष्मागारंतदपिचशशाङ्केनतुलितम् ॥

स्रवन्मूत्रक्लिन्नंकरिवरकरस्पर्द्धिजघनं ।
मुहुर्निन्द्यंरूपंकविजनविशेषैर्गुरुकृतम् ॥१॥

अर्थात् स्त्रिन के स्तन मांस के लोंदा है ताको सोना के कलश की उपमा देत है। मुख थूक खकार जो कफ को घर ताको चंद्रमा की तुलना कहत है मूत्र तें भी जो जांघ को हाथी के सूंड के समान वर्णन करे हैं सो बारंबार स्त्रिन को रूप निंदनीय और विकारयुक्त ताको कबिनने कैसो बढ़ायो है याते संसारिक विषय जितनो है सो सब ऊपर ते सुख को आभामात्र झलके है अन्त में नरक भोगही को दुख मिले है और जिनको अलौकिक आनंद को अनुभव है उनको मन कदापि लौकिक सुख को नहीं चाहे जैसे यह ॥

॥ श्लोक ॥

तृणंब्रह्मविदः स्वर्गस्तृणं शूरस्य जीवितम् ।
जितेन्द्रियेतृणंनारीनिस्पृहस्यतृणंनृपः ॥१॥

अर्थात् जिनको भगवदानंद को अनुभव है उनको स्वर्ग को सुख तृण समान है और जो लोग शूरवां हैं उनको अपनो जीवन तृण समान है जिनकी इन्द्री बस में है उनको नारी तृण समान है और जाको कछु इच्छा नहीं तिनको राजहु तृण समान है याते मनुष्य को चाहिये जो लौकिक विषय ते इन्द्रिन को निग्रह अर्थात् रोक राखे जैसे राग रागिनी और बाजित्रादिक सुनबे में मन प्रवर्त होय तब यह सोचनो चाहिये भगवान ने जो वेणुनाद कियो सो कैसो

मन को आकर्षण कर वे वारो मधुर मनोहर स्वर सब के कानन में लग्यो जाते मुनीश्वरन की समाधि छुट गई और जल थल पशू पच्छि वृच्छ सब जड़ और चैतन थकित होय रहे और कैसो अद्भुत रास में राग रागनि को आलाप और नृत ब्रज भक्तन के संग भगवान ने कियो और सर्वदा करत हैं सो बल्लभाख्यान में वर्णन है जहां नित्य रास बहु घेरे और अनेक रास लीला करे सो जाको देख देवता गंधर्व किन्नर अपछरा सब दे दसा भूल ध्यान लगाय मोहित हो गए सो ऐसे प्रभु को कितन भजन छोड़ि यह झूंठी ताना रीरी में कहा मन लगावनो ऐसेही जिभ्या को स्वाद जो श्री ठाकुर जी को अधरामृत जिनके लिये ब्रज भक्तन ने बड़ो ताप कियो सो कैसो मधुर पदार्थ होयगो सो अधरामृत को स्पर्श जा वस्तु में नहीं सो अन प्रसादी वस्तु की कहा इच्छा राखनी और मिष्टान को कहा ललचनो और जब सुगंधादिक में मन चले तो भगवत चरनारविंद की कुंमकुंम और श्री अङ्ग को प्रसेव को बिचारनो जो यामें कैसी सुन्दर सुगंध होयगी जाके लिये मुनीश्वर लोग भ्रमर होय वा सुगंध को लेवे को डोलत फिरे हैं और इतर गंध सब वा सुगंध के आगे दुरगंधही समान है याकी इच्छा कहा करनी और ऐसेही धन संपत कुटुम्ब इत्यादि की अवस्था है जो अधिदैविक लक्ष्मी जाके आगे सब लौकिक धन संपत्त धूर समान है सो लक्ष्मी जाके चरणारविंद के सेवन में नित्य तत्पर रहत है ऐसे प्रभु के मिलवे की चाह न करके यह धन संपत के लाभ की कहा चाहना करनी और ऐसेही अखिल ब्रह्मण्ड और तीन लोक में जाकी सृष्टि है सो ऐसे भगवत में प्रीत न करके लौकिक कुटुम्ब के लिये

कहा भिकनो जहां सब सृष्टि के उत्पन्न करता भगवान को प्रेम करके अपनाय लियो तो सब अपनेही कुटुम्ब हो गये याते और कुटुम्ब की इच्छा काहे राखनी या प्रकार लौकिक बासनाते इन्द्रिन को निग्रह करके संसार ते वैराग्य राख मन को भगवत में लगाय अनुभव करत रहे तो निरोद्ध सिद्ध हो जाय और जब ताईं संसारिक बासना में मन फस्यो है तब ताईं जीव को अनेक दुख और भय लगे ही रहत है जैसे ॥

॥ श्लोक ॥

भोगेरोगभयंकुलेच्युतिभयंवित्तेनृपालाद्भयं ।
मानेदैन्यभयंवलेरिपुभयंरूपेतरूण्याभयम् ॥
शास्त्रेवादिभयंगुणेखलभयंकायेकृतान्ताद्भयं
सर्वंवस्तुभयान्वितंभुविनृणांविष्णोः पदंनिर्भयम् ॥

अर्थात् भोग बिलास करबे में रोग को भय है कुलीन होबे में च्युत होवे को भय है द्रव्यादिक होयबे में राजा को भय है मान प्रतिष्ठा में दीनता को भय है जो मान भये ते दीनता नहीं बने बल होये में शत्रु को भय है शरीर में मृत्यु को भय है या प्रकार भुवलोक में मनुष्य को सर्व वस्तु में भय लग्यो है केवल भगवान के चरणारविंद में कोई भय नहीं यामें मन राखि निर्भय होय याते संसार ते वैराग्य और भगवत चरणारविन्द में चित्त राखि जीव तो को सुख है अन्य उपाय नहीं ॥

॥ प्रसंग १० क्रोध के विषय में ॥

ज्यों बांस सेंते अग्नि उत्पन्न होय सब बांस को जराय नष्ट कर

देत है और आस पास के वृच्छनहु को जरावे है ताही प्रकार मनुष्य को क्रोध उत्पन्न होय अपनी हानि करे औरहु को दुःख देत है सो क्रोध तमोगुणी को धर्म है तामसी जनको सदा क्लेशही करत बीते है भगवदानंद सर्वथातिरोधान होय जाय है क्रोध चांडाल को रूप है क्रोध को आवेश जब आवे है तब ज्ञान बुद्धि सब नष्ट हो जाय है याते जब क्रोध आवे तब अस्नान कर डारनो ऐसो शास्त्रन में कह्यो है ताते क्रोध कदापि नहीं करनो क्रोध कियेते सर्व प्रकार अपनो बिगाड़ होय है वा समय तो सूझै नहीं फेर पाछे पछतावो ही पड़े है एक बाबा जी को प्रसंग है एक मनुष्य कोई बाबा जी के पास अग्नि मांगवे गयो बाबाजी ने कह्यो अग्नि नहीं है तब वा मनुष्य ने कह्यो थोड़ीही सी दीजिये तब बबाजी रोषकर आंख उठाय के कह्यो हम कहे हैं तू चल्योजा अग्नि यहां नहीं तापर वा मनुष्य ने कह्यो महात्मा जी या राख के नीचे धुंवा तो दिखे है तासो आप देखलीजे होय तो देय दीजिये इतने में बाबाजी लकड़ी हाथ में ले क्रोध कर वा मनुष्य को मारबे को दौड़े तब वा मनुष्य ने कह्यो बाबाजी अग्नि भीतर नहीं रही तो अब भपकी कहां ते तब बाबाजी लज्जित होय बैठ गये सो क्रोधाग्नि भीतर राखे ते हानिही करे है राजा अम्बरीष भगवत भक्त सो तिनके ऊपर दुर्वासा ऋषी ने क्रोध कियो सो भगवान अपने भक्त के ऊपर क्रोध कर्यो देखि सहन न करि सके तत्च्छण दुर्वासा को जरायबे को अपनो सुदरशन चक्र पठायो सो दुर्वासा ऋषी देवलोक वैकुण्ठ आदि सब जगा फिरे परन्तु कहुं रच्छा न पाई अन्त राजा अम्बरीषही के शरण आए और राजा बड़े शान्त सुभाव तत्काल चमा

कर सुदरशन को शान्त कियो और नेक रोष न लाये सो सब कथा श्री भागवत आदिकन में प्रसिद्ध ही है यासो क्रोधी सुभाव वारे को थोड़ी २ बात बात में क्रोध उत्पन्न हो कर दिन रात क्लेश ही में व्यतीत होत है और नीत में कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

क्षान्तिश्चेत् कवचेन किं किमरि-
भिः क्रोधोस्ति चेद्देहिनाम् ॥

अर्थात् जो सहन शील हैं उनको कवच कर के कहा विशेषता है और जिन को क्रोधी सुभाव है उन को और शत्रु कहा ढूंढ़नो है अर्थात् उनके शरीर ही शत्रु बन्यो है ताते कोई कारण करके क्रोध उत्पन्न भी होय काहे जो जीव को धर्म है काम क्रोध झट याको व्याप जाय है तो वा समय मन को रोकनो और शान्तता कर वा काल को धीर्य में उत्तर दे बिताइए कोई ते क्रोध बढ़ाय अपनी टेव सर्वथा न बिगाड़िये और मार पीट की नौबत न पहुंचाइये जामें एक ते अनेक को न जनाय और अपनी इज्जत सेत में चली जाय पाछे पछताये ते कहा होय सो क्रोध कोप आमर्ष रोष प्रतिघः रूठ इत्यादि क्रोध ही सुक्षम भेद और परियाय शब्द है। याते मन अपने में तू क्रोध मत लाइयो ॥

॥ प्रसंग ११ क्षमा के विषय में ॥

क्षमा महत पुरुष और बड़े लोगन को चिन्ह है प्रभु जो है सो साक्षात क्षमावंत विख्यात है जीव को दोष नहीं देखे

जो देखे तो कदापि जीव को निस्तारो ही न हो सो वचनामृत में कह्यो है ॥ सहन कर सहन कर श्री वल्लभ की वाणी है और दोसौ बावन वैष्णव की वार्ता में प्रसिद्ध ही है जो कृष्णदास अधिकारी ने श्री गुसांईं जी को श्री नाथ जीते छ महीना को वियोग करायो परंतु आप कृपा ही किये और कृष्णदास को अपराध क्षमा कर अधिकार सौंप दियो सो क्षमा कहा जो कोई अपनो अपराध करे और वाको दंड देवे की सर्व प्रकार अपने में समर्थ है पर अपनी ओर देख वा पर विचार छोड़ देनो अथवा साधारन सिक्षा दे देनी सो क्षमा है सो ऐसे बड़े लोगन में सुभाविक धर्म होत है काहे जो सतो गुणी उत्तम प्रकृति है सो सतोगुणी को ऐसोई धर्म होत है उन को तामस उत्पन्न नहीं होय सो बड़े लोग सात्यक ही सुभाव के होय हैं त्रिदेव की परीक्षा में भृगुऋषी ने विष्णु को लात मारो सो विष्णु भगवान ने क्षमा ही कियो जो चाहते तो भृगु को भस्म ही कर देते परंतु बड़ेन में जो क्षमा धर्म है सो जगत में विख्यात कैसे हो तो निदान भृगुऋषी ने त्रिदेव की परीक्षा ले कह्यो जो ब्रह्मा विष्णु महेस ये त्रिदेव में विष्णु ही भगवान सब में बड़े हैं सो सब कथा शास्त्र पुराण आदिक में प्रसिद्ध ही है और क्षमावान पुरुष को शत्रुहु कछु कर नहीं सके सो नीत में कह्यो है ॥

क्षमाखड्गः करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति।
अतृणे पतितो वन्हिः स्वयमेवोपशाम्यति॥१॥

अर्थ–जाके हाथ में क्षमा रूपी तरवार है तो वाको शत्रु कहा कर सके है जैसे तृण बिना अग्नि पड़ी भई आप ही

बुझ जाय है ताते क्षमा में अनेक गुण हैं क्रोध किये अनेक दुर्गुण है जो मनुष्य और पर क्षमा नहीं करे सो वे अपने जावे को मारग अथवा पुल जापर होय के जानो है सो वा को तोड़े है काहे जो ऐसो मनुष्य जगत में कोन है जो जाते जन्म भर में कोई भी अपराध बन न आवे तो जाने और दूसरे को अपराध क्षमा नहीं कियो सो अपने करे अपराध को भगवान ते क्षमा करावे की हु आसा न राखे वाको अपराध भगवान कैसे क्षमा करेंगे अब यदि यह संका होय जो अपराध करवे वारे पर क्षमा करनो और दंड न देनो यह अन्याव है तहां विवेक है जैसे राजा के राज में सब प्रजा वसे है और एक ने एक को माखो अथवा कोई ने कोई की चोरी करी और राजा वा मारवे वारे अथवा चोरी करवे वारे को दंड न दे तो यह अन्याव है और राजा को कोई ते कछु कसूर बन गयो कोई ने गारी दीनी अथवा निंदा करी अथवा कछु नुकसान कियो और राजा सर्व समर्थ होकर अपनी ओर देखि वाको क्षमा कियो अथवा साधारन ताड़ना कर छोड़ दियो सो क्षमा है याही प्रकार कितने अज्ञानी लोग अपने पाप कर्म के फलते दुःख पाय अपने को दोष नहीं दे किन्तु भगवान की निन्दा करे है और अपयश देत है परंतु भगवान उन को दोष न विचार अपने शान्त और दयालु सुभाव ते क्षमा कर उनको खायवे को देत ही है सो यह क्षमा है जैसे भृगुरुषी ने लात मारो सो अपराध क्षमा कियो और राजा अम्बरीष पर दुर्वासा जी ने क्रोध कियो ताके दंड के लिये सुदरशन को पठायो सो न्याव है ताते मनुष्यन कों यह विचारनो चहिये जैसे एक मनुष्य ने कोई को गारी दियो और वह मनुष्य

क्षमा कर चुप होय रह्यो तो याको दंड भगवान गारी देवे वारे को अवश्य देहींगे और जो वोहु उलटि के गारी दे तो अपनो न्याव आप करिले तो न्याव करवे वारे भगवान को अपने माथे बड़ो नहीं जाने दूसरे अपने को विशेष दुख में डार्यो तीसरे गारी देवे वारे को अधिक स्वतंत्र कियो काहे जो जाने गारी दियो है सो अपने को बलवान जान दियो है चुप न रहे ते मार पीट होय और भी दस पांच लोग जानेंगे क्लेश बढ़ेहीगो और जो एक गारी खाय चुप होय रह्यो तो एक गारी ही भर रही और गारी देवे वारो आप लज्जित भयो जहां घास भुस नहीं तहां आग गिरि कर कहा जरावेगी ताते क्षमा सहन इत्यादिक गुण भगवत में है सो अपने भक्तन मेंहु देख भगवान अति प्रसन्न होत है याते जो मनुष्य क्षमा सहन सुभाव राखे है वह आप सुखी होय दूसरे को हु सुख देत है क्षमा कड़ुवो औषध है पीवते कड़ुवो लगे पाछे गुण दे और सुख कारी होय सो हे जीव तू अपराध ते भर्यो है क्षमा को सुभाव राख तो प्रभु तेरे पर भी क्षमा करेंगे ॥

॥ प्रसंग १२ लोभ के विषय में ॥

यह दृष्टान्त जगत में प्रसिद्ध ही है जो लालच वस परलोक नसाय अर्थात् लोभी पुरुषन को अपने धर्म अधर्म को विचार कछु नहीं रहे लौकिक पदार्थ के लिये वे ऐसो चाहे है जो कौन रीत ते कहां ते पाइये और लाय के संचय करिये कोई प्रकार संतुष्ट नहीं होय ज्यौं २ मिले त्यों अधिक उन को लालच बढ़त जाय है याही उद्योग में अपनो जन्मारो व्यतीत कर देत है कदापि उनके चित्त को स्वास्थ्य नहीं होय

जो परमार्थ को विचार करें भगवत आनन्द को सर्वथा तिरोधान ही रहै है अंत में मक्षिका की दसा को प्राप्त होय है जैसे ॥

॥ दोहा ॥

माखी बैठी सहत पर, चारो पांव गड़ाय ।
गड़ते गड़ते धंस गई, लालच बुरी बलाय॥१॥

और लालच करे हाथ हु को जाय है जैसे यह दृष्टान्त है॥ एक ब्राह्मण को एक हंसनी मिली सो वह नित्य एक सोने को अंडा देत रही सो वाने विचार्यो जो यह हंसनी नित्य एक अंडा सोने को देत है सो याको मार को जो याके पेट में अखूट धन है निकाल लीजिये तब हंसनी को मार डार्यो सो जो एक अंडा देत रही सोउ गयो पाछे वह ब्राह्मण पछतायके रह्यो सो लोभी को धन अधिक लालच ही में नष्ट होत है और कह्यो है लुब्धानां याचको शत्रुः ॥ लोभी ते मांगवे आवे तो वह शत्रु ही समान लगे लोभी पुरुष न आप खाय न और को खवावे हाय हाय करते जन्म गंवावे अंत को मर जाय धन जहां को तहां रह जाय अथवा चोर मूस ले जाय वा ठग ठगाई कर जाय ताते बहुत लोभ के किये लोक परलोक दोहुन में हानि ही होत है जैसे यह प्रसंग है ॥ चार मनुष्य तीर्थ जात्रा को चले सो मारग में एक मोहर की थैली पड़ी पाई ताको ले आगे जाय एक गांम के बाहर डेरा कियो तहां दोय जन को गाम में मिठाई लेवे को

पठाये और दोय जने वा मोहर की थैली को अगोरवे को रहे जो मिठाई लेवे को गये सो वे आपस में विचार कियो जो या मिठाई में विष मिलाय ले चलिये जामें वे दोऊ जने मिठाई खाय के मर जायं और मोहर अपने दोऊ जने बांट लेहिंगे सो वे सोई करके ले चले और यहां इन दोऊ जनेने विचार करी रख्यो जो वे दोऊ जने मिठाई लेकर आवें तो ही उनको आपन मार डारिये और मोहर बांट लीजिये सो झट तरवार निकार जैसे वे मिठाई ले करके आये तैसे ही उन दोउन को मार डारे और मिठाई जो रही सो आप दोऊ मिल के खाय गये सो येहु दोय जने मर गये सो देखनो चहिये जो लोभ के बस चारो मारे गये वाह वाह कैसी मीठी लालच की मिठाई खाई जो मोहर जहां की तहां पड़ी रही और लोभ के पीछे चारो की जान गई और तीर्थ जात्राहु न भई सो कह्यो है ॥ "लोभोप्यस्ति गुणेनकिम्" सो लोभ में सर्व प्रकार दुर्गुण ही है संसारिक वस्तु को लोभ सदा दुखदाई ही होत है भगवत सम्बन्धी लोभ आनन्द दायक है ताते हे लालची मन ए दोहा को अर्थ विचार इच्छा राख ॥

॥ दोहा ॥

इच्छा इतनी राखिये, जितने पेट भराय ।
जामें भूखो ना रहे, ना वैष्णव भूखो जाय ॥१॥

॥ श्लोक ॥

लोभात् क्रोधः प्रभवति लोभात् कामः

प्रजायते ॥ लोभान्मोहश्च नाशश्च
लोभः पापस्य कारणम् ॥ १ ॥

॥ प्रसंग १३ संतोष के विषय में ॥

संतोष कहा जो उद्योग करके भाग्यानुसार जो प्राप्त हो जाय भगवत इच्छा मानि वाही में निर्वाह कर प्रसन्न रहै और भगवद इच्छानुसार चले लोभ करके अधिक लाभ के लिये हाय हाय रोवनो झीकनो न करे या करे ते अधिक कदापि नहीं मिले यद्यपि संतोष किये ते धन नहि मिल जाय परंतु धन मिले ते जो सुख सो संतोष वृत्ति राखि वह सुख प्राप्त हो जाय है और संतोष करेते दुख दूर नहीं हो जाय पर दुख सहन की समर्थ हो जाय है और प्रारब्ध योग करके अधिक मिलनो है तो भगवत इच्छातें अनायास आप ही मिल जाय है याते संतोष न करनो सो दुख ही को कारण है याते "संतोषं परमं सुखं" कह्यो है जैसे गरीब छोरा की माता ने शिक्षा करी है ॥ प्रसंग ॥ एक गरीब को लड़का जब वाकी माता रोवे लगी तब अपने माता सो कह्यो है माता यह बड़ी आपत्य है जो नित नित बाजरा की रोटी और चना को साक मो को खायवे को मिले है जहां दूसरेन के छोरा नित्य दूध मलाई मिठाई ते अपनो पेट भरे हैं तब माता बोली बेटा यह ठाकुर जी की बड़ी कृपा है जो आपन को बाजरा की रोटी और चना को साक पेट भर खायवे को मिले है जहां कितनेन के छोरा भूखे विलखे है

आधेहु पेट को ठिकानो नहीं फेर वह लड़का बोल्यो माता एहु बड़ी विपत्य है जो नित्य सबेरे जाड़ा पाला में उठि पेट के धंधा को पावन जानो आवनो जब के औरन के छोरा गाड़ी और घोड़न पर बैठे जाय हैं फेर माता ने कह्यो बेटा एहु भगवान की अति दया है जो अपने पावन ते चलनो और अपनो काम आप करनो कोई की पराधीनता नहीं जैसे कितने लूले लंगड़ेन को जब और कोई उठावे तो उठे बैठावे तब बैठे चलावे तब चले खायवे को दें तब खाय कोई पानी देवे तब पीवे नहीं तो पड़े पड़े मर जांय, फेर लड़का बोल्यो अरे मा यह भी तो बड़ो कष्ट है जो सबेरे उठिके कोस भर जानो और मेहनत मजूरी करि सांझ को अपने घर आवनो दिन भर घर तें कछू नातो नहीं देखो लोगन के छोरा दिन भर अपने घर में खिलवो करे है तब फेर माताने उत्तर दियो बेटा बड़ी भगवत की पूरण कृपा जानिये जो दिन भर पेट को उद्योग कर सांझ को अपने घर में आय भोजन कर अपने कुटुम्ब सो मिल भगवत भजन करि आनन्द सो सोवनो देखो कितनेन को देस देस बन बन पेट के पीछे जानो पड़े है और अनेक दुख भोगे है बरसन घर को मोढ़ो देखिवे में नहीं आवे तब लड़का ने कह्यो माता सब तो ठीक पर यह तो बड़ो ही दुख है जो माटी के घर में घास भूस छप्पर को झोपड़ा टट्टर लगाय रहनो और जाड़ा गरमी सहनो तब माता ने हंसके कह्यो और यह समाधान दियो जो हे बेटा देख वह करुना निधान भगवान ने आपन को कैसी सुंदर जोनी में जनम दियो यह मनुष्य तन रूपी घर में वास और

बुद्धी रूपी दीपक को प्रकाश जामें सर्वदा बन्यो रहै है जो चौरासी लाख जोईनी में सबते उत्तम और बलवान है जहां पशू पची जलचर बनचर आदिक सब याके बस होत हैं और जिन के तन रूपी घर में ऐसी बुद्धि को हु प्रकाश नहीं जो अपने रहवे के लिये ऐसो सुंदर घर बनाय सके और खायवे को नाना प्रकार के पकवान और मिष्टान्न करि सके और अनेक सुख के भोगवे की योग्यता सिवाय मनुष्य तन के और को कदापि स्वपने हु में प्राप्त नहीं देखो अनेकन जीव हैं कोई तो जल में रहै केवल माटी खाय निर्वाह करे है कितने वृत्तन के डार को अपनो घर मान फल पत्ता खाय जीवत है कितने भूमि पर रहि घास फूस खाय वृत्तन के छाया मेंही विश्राम ले अपनो जन्मारो व्यतीत करे है जिन को जाड़ा और गरमी के निवारण कों वस्त्र पंखा कोठरी इत्यादिक के रचना करवे की सामर्थ हु नहीं सो भगवत की कृपाते ऐसो मनुष्य तन पाये भगवत उपकार न मान सन्तुष्ट न होनो और वह भगवत को गुणगान और धन्यवाद नहीं करनो यह कैसो भूल और कृतघ्नता को काम है ताते सर्व प्रकार भगवान को यश मान संतोष राखेही सुख है ॥

॥ दोहा ॥

गो धन गज धन बाज धन, और रतन धन खान। जब आवे संतोष धन सब धन धूर समान ॥

॥ श्लोक ॥

इच्छितं मनसः सर्वं कस्य संपद्यते सुखं। दैवा धीनं यतः सर्वं तस्मात् सन्तोषमाश्रयेत् ॥

अर्थात् मनुष्य के इच्छा प्रमाण सब सुख किनको प्राप्त होय है काहे जी इच्छा को संतुष्टता नहीं और सब सुख होनो यह दैवाधीन है याते संतोषही राखे सुख है ॥

॥ प्रसंग १४ मोह के विषय में ॥

मोह रूपी उन्माद जगत में अत्यन्त प्रबल है याते देवता और मनुष्य कोई नहीं बचे जिनको भगवत भक्ति को रस प्राप्त है वोही या माया के मोहते छुटे हैं काहे जो भगवत भक्तन को भक्ति करके भगवत स्वरूप में आसक्ति और संसारिक पदार्थन को त्याग हो जाय है और संसारी व्यवहार तुच्छ समान लगे है और संसारते उनको गिलानी उत्पन्न होकर मोह छूट जाय है काहे जो मोह है सो अज्ञानता को कारण है जब भगवत में मन लग्यो तब अज्ञानता दूर होकर अलौकिक आनंद और भगवत स्वरूप को ज्ञान प्राप्त हो जाय है बिना भगवत भक्ति के और कोई उपाय नहीं जो या जीव को मोह दूर होय भगवत भक्ति रहित केवल बड़े बड़े ज्ञानी और कर्ममारगीन को हु मोह व्याप बाधक भयो है सो सब कथा सास्त्र पुराण में प्रसिद्धही है जैसे ये हु एक प्रसंग है। एक पुरुष बहुत पुण्य करके वैकुंठ के दर्शन को जावे वारो रह्यो जब देवता वाके लिये विमान लेके आये तब वह पुरुष को विमान पर चढ़ती विरिया मन में मोह उत्पन्न भयो जो

स्त्री बेटा नाती पोता अपने सबन को विमान पर बैठाय ले चलूं सो देवतानते पूछ्यौ तब देवतान ने कह्यौ कि विमान पर बैठवे की आज्ञा केवल तेरेही लिये है औरन को हम बिमान के ऊपर नहीं चढ़ावेंगे तब वह पुरुष बोल्यो जो मैं बिमान को पावा पकड़ के लटकत चलूं तो यामें तो कछु मनाही नहीं है सो या बात को देवतान ने मान लियो और वा पुरुष ने बिमान को पावा पकड़्यौ वाकी स्त्रि ने पुरुष को पांव पकड़्यौ वाके बेटान ने मा को पांव पकड़्यो या रीत सो एक एक ने एक को पांव पकड़ के चले जब विमान उड़्यौ तब लड़का भय के मारे रोवे लग्यो तब पिता ने कह्यौ बेटा तूं रोवे मति मैं तोको लड्डुवा देऊंगो परन्तु लड़का चुप न भयो और हु अधिक रोयवे लग्यो तब वाके पिता कों सुधि न रही घबराय के हाथ सो बतावे लग्यो कि बेटा तो को एतनो बड़ो लड्डुवा देऊंगो ज्योंही दोऊ हाथ पसार लड्डुवाको आकार बतायो तैसे विमान को पावा हाथते छुट गयो और सब के सब पृथवी के ऊपर धड़ाम सो गिर पड़े और विमान तो चल्यो गयो तो देखनो चहिये जो लौकिक संबंधिन को मोह कितनो बाधक भयो जो बैकुंठ जाते पाछे फेर लायो जड़ भरथजी ऐसे ज्ञानी और तपस्वी को एक हरिन के बचा के मोह करि के तीन जन्म जब भगवत भक्ति करी तब मोहते छुट भगवत धाम को प्राप्त भये सो कथा भागवत आदिक में प्रसिद्ध ही है ताते मोह मीठो विष है खात मीठो लगे पाछे प्राणही ले सो जीव मोह के बस होय अनेक दुख भोगवोही करे है कदापि संसारते निस्तारो नहीं होय ॥

प्रसिद्धही है तहां राजा जनक आदिकन की कथा श्री भागवत में याही प्रकार वरणन करी है भगवत संबंध रहित केवल संसारिक मोह वोही बाधक है मोह में पड़े रहते सर्वथा भगवत की प्राप्ति नहीं वेद व्यास जी को मोह उत्पन्न भयो ता विरिया शुकदेव जी को घर रहिवे के कारण वहुत समुझायो पर शुकदेवजी परम भगवत भक्त कदापि मोह में न आये याते लौकिक मोह को त्यागनोई में सुख है जैसे दृष्टान्त है जो वहेलिया सुगा पकड़वे के लिये डोरी बांध बीच में वाके एक बांस की भुंगली लगाय राखे है जब सूगा आय वा भुंगली पर बैठे है तो भुंगली उलट जाय है वाके संग सूगा हू भुंगली पकड़े उलट जाय है परन्तु अज्ञानता करके या मोहते भुंगली को छोड़े नहीं जो छोड़ूंगो तो भूमी पर गिरोंगो सो भुंगली को पकड़ लटक्यो रहे है इतने में वहेलिया आय वा सूगा को पकड़ पींजरान में बंद कर देत है यदि सूगा वह भुंगली को छोड़ उड़ जातो तो वहेलिया के हाथ कदापि न पड़तो और पींजरा में बंद होय अनेक दुख न भोगतो याही प्रकार अज्ञानी जीव भगवत आनंदते रहित मोह रूपी भुंगली को पकड़े है कदापि वाको त्याग नहीं करे माया रूपी वहेलिया के हाथ फस संसार रूपी पींजरा में रहि जन्म मरण रूपी अनेक दुख भोगवो करे है और जितनो लौकिक विषयादिक पदार्थ को मनुष्य संग्रह करे है और वाते समीपता राखे है और संग करे है देखे है वितनोही विषय अधिक बढ़तो जाय है और तितनोही मोह में फसे है याही कारणते ऋषी और ज्ञानी लोग नगर को छोड़ बन में रहते जामें विषयादिते बचे रहे

और मोह को न प्राप्त होयं याते मनुष्य को मोहादिक को त्याग भगवत चरणारविन्द में चित राखि कुशल और सुख है ॥

॥ प्रसंग १६ झूंठ के विषयमें ॥

झूंठ अर्थात असत्य जामें सत्यता नहीं अथवा वास्तविक वह बात यथार्थ न होय सो झूंठ बोलनो झूंठ भरोसा देनो झूंठ धर्म अधर्म आचरण करनो इत्यादिक जितनो झूंठ कार्य है सो निंदनीय और दुखदाई है अन्त को नष्टताही को प्राप्त होय है जैसे यह संसार झूंठो है याहीते संसार में कोई सुखी नहीं सब दुखही वर्ताव है सो बड़े २ महत पुरुषन ने याकी निंदाही करी है और यद्यपि लोग करत हैं और अन्त में नाशही होत है और जगत में भगवत संबंधी जितनो कार्य है भगवत सेवन भजन कथन स्मरण इत्यादिक सब सत्य और अविचल है काहे जो भगवत सत्य है ताते भगवत संबंधी पदार्थ हु सब सांच है सो उत्तम पुरुष और बुद्धिमान लोग झूंठो आचरण कदापि नहीं करें तहां मनुष्य के सर्वांग में बाणी है सो अन्तःकरण को द्वार है जो अन्तःकरण में होय सो बाणी द्वारा निकसे है झूंठ बोलिते स्पष्ट प्रगट होय जो याके अन्तःकरण में झूंठ भर्यो है यह मनुष्य झूंठो है लोक में अप्रतिष्ठा और अपमान होय और कोई वाको काहे को विश्वास हु नहीं राखि अन्त में वह नर्कानुगामी होत है सो झूंठ बोलनो सब अधर्म को मूल है जैसे यह प्रसंग में काहे एक साधू के पास कोई चेला होवे गयो सो साधु ने मंत्र दे चेला कर उपदेश कियो जो चोरी मत करियो मदिरा मत पीजियो जूवा मत खेलियो परस्त्रीगमन मति कीजियो और

झूंठ मत बोलियो तब वह चेलाने कह्यौ बाबाजी इतनो सब मोसो नहीं छूटेगो एक बात कृपा करके छोड़ाये लीजिये सो कदापि मैं नहीं करूंगो तब साधुने विचार के कह्यौ जा झूंठ मत बोलियो तब वह चेला झूंठ बोलनो त्याग अपने घर आयो रात कों जब चोरी करवे चल्यो तब मारग में विचार्यौ जो गुरूजी ने झूंठ बोलवे की नाहीं करी है जो पकड़ो गयो तो झूंठ बोलोंगो नहीं सांच कहूंगो तो बंदीखाने पड़ोंगो यह सोच पाछे घर फिर आयो दूसरे दिन मद्यपान को चल्यौ तब यह विचार्यौ जो कोऊ मिलेंगे अथवा नशा में गिरूंगो और लोग पूछेंगे तो झूंठ तो बोलनो नहीं और सांच कहे जात के लोग जात बाहर करिदेंगे सो हु ठीक नहीं या भयते तहांते हु पाछो फिर आयो तीसरे दिन जूवा खिलवे गयो तहां सोच्यौ जो बिना झूंठ के बोले तो जूवा में जीत होयगी नहीं उलटी घर की पूंजी हू हाथ सो जायगी सो वहां तेहू पाछो घर को आयो तब वा साधू के पास जाय के कह्यौ वाह वाह गुरूजी आप ने तो एक बात ऐसी छोड़ाई के सबही छोड़ाय लियो तब साधु ने कह्यो मैंने तो एकही बात जो अधर्म को मूर है सोई छोड़ायो है आगे जामें झूंठ न बोलनो पड़े सो करियो सो चेला देख्यौ तो झूठ बोलनो सब कुकर्म के संग लग्यौ है निदान हार के कुकर्म को त्यागनो ही पड़्यो ताते झूंठ बोलनो सब पाप की जड़ है लोक परलोक दोहुन में हानि करे है और एक विद्यावानतें कोई ने पूछ्यो जो झूंठ बोलते कहा होय है तब वाने उत्तर दियो जो फेर वह मनुष्य सांच हु कहे तो वाको कोई विश्वास न करे जैसे यह प्रसंग है एक लड़का नित्य भेड़ी लेके बन में

चरावे को जातो तहांते गाम के लोगन को पुकारे जो नाहर आयो नाहर आयो तुम दौड़ियो मोकों बचाइयो सो दो दिना गाम के लोग वाकी पुकार सुनि बचावे को गये तहां जाय के देखें तो कछु भी नहीं है तब लड़का ने कह्यो जो मैंने झूंठ हांसी करी हती इहां बाघ कहां तब वे गाम के लोग पाछे फिर आये एक दिन सचमुच बाघ आयो तब वा लड़का ने गाम के लोगन को बहुत पुकाख्यो सो वाके झूंठ बोलबे पर कोउ न गयो निदान बाघ ने वा लड़का को मारही डाख्यो तो देखिये जो झूंठ बोलबे ते कितनी हानि भई जो जीवही गयो और लबार कहायो ताते झूंठ बोलबे की टेव कदापि न राखिये राजा युधिष्टर ऐसे धर्मिष्ट सो अंगुठा हिलाय इतनो कह्यो नरो वा कुंजरो वा सो इतने झूंठ के कारण हिमालया में अंगुठा गल्यो और नर्क देखनो पड़्यो ब्रह्मा जी झूंठ बोले सो प्रतिष्ठा जाती रही जगत में अपुज्य भये। गैया ने झूंठी साची भरी ताते मुख अपवित्र भयो और श्राप पाय विष्टा खाय है सो झूंठ को बोलनो ऐसो बुरो है यदि कोई अनजान मनुष्य अपने ते पूछे जो फलाने नगर की बाट कौन है अथवा फलानी वस्तु कहां मिलेगी और अपने वाको झूंठ और को और बताय दियो और वह मनुष्य श्रम करके वहां गयो और वह स्थान न पायो तो वाको कितनो दुख होयगो और अपने हाथ पाप के सिवाय कहा लग्यो या प्रकार काहुको कछु देवे अर्थ झूंठो भरोसाहु नहीं देनो। यदि अब यह कहो कि संसार में रहि केवल सत्यही बोले निर्वाह नहीं तहां बिवेक है कितनो झूंठ बोलनो ऐसो है जो वह सांच बोलनो है

कितनो सांच ऐसो है जामें झूंठ को पाप है कोई मलिच्छ अपनो धर्म लेतो होय तो वा जगे झूंठ कहेते धर्म रहे तो वह झूंठ नहीं सत्य है ऐसेही कोई कोई को प्राण व्यर्थ लेत होय और वा समे झूंठ कहेते वाके प्राण की रक्षा होत होय तो वह झूंठ नहीं वह सांच है और सत्य बोलेते कोई के व्यर्थ प्राण जाय तो वह सत्य झूंठ समान है जैसे सोने के घड़ा में माटी भरी है ऊपर ते सोना भीतर माटी है या प्रकार कोई जगे झूंठही बोलनो सांच है जैसे ऊपरते माटी को घड़ा झलके है भीतर वाके सोना भर्यो है जैसे ऊपर ते पाप दीखे है भीतर पुण्य भर्यो है वा समे झूंठ बोलवे वारे की चेष्टा और तात्पर्य को बिचारिये जो परोपकार में है अथवा वाकी बुराई में जैसे कोई बालक झरोखा में देखबे को दौड़े और वाको पिता बरजे है जो वहां मत जाइयो वहां भूत ठाड़ो है पकड़ेगो सो यह भूत को झूंठ कहनो झूंठ नहीं काहे जो पिता को अभिप्राय तो लड़का की भलाई में है कि जो कहीं झरोखाते गिरेगो तो हाथ पाव टुटेगो और बिना यह भय दिखाये मानेगो नहीं तो या में झूंठ बोलबे के पाप ते सौगुनो पुण्य वाके प्राण रक्षा में है तो वह बड़ो पुण्य थोडे पाप को भस्म कर पुण्यही बन्यो रहे है या प्रकार सब बात में बिवेक बिचार है सो बिबेक के प्रसंग में लिख्यो है देख बिचार लेनो ॥

॥ दोहा ॥

झूंठो झूंठेते बुरो, जो कंचन को होय।
सांचो माटी को भलो, जाते सांचो होय॥

सो प्रभु सांचही पर प्रसन्न होत है ताते मनुष्य को मिथ्या और झूंठो आचरण कदापि ग्रहण नहीं करनो । सो हे मन तू प्रभु ते सांचो रहियो ॥

॥ प्रसंग १७ सत्यता के विषय में ॥

भगवत ने जड़ जीव चैतन्य इत्यादिक सब जगत तथा पदार्थन में एक सत्यता अर्थात् सत्ता दीनी है और सत्ताही करके वह वस्तु यथार्थ बनी रहे है और जैसी जामें योग्यता और सामर्थ है सो अपने कार्य में यथार्थ गुण को करे है और जब ताईं वह पदार्थन में वाको सत्त धर्म रहे है तभी ताईं लोग वाकी चाहना करे हैं और वह काम में आवे है और सत्ता निकल जाय तब वह वस्तु यथार्थ काम की नहीं रहे वाको लोग बिनासत्त निर्सत्त अथवा असत कहे हैं जैसे शरीर में सत्ता अग्नि और वीर्य्यादिक करके है वह निकल जाय तो शरीर निर्बल और सत्ताहीन हो जाय कछु शरीर संबंधी बल को काम नहीं कर सके अथवा जितनो कमती होत जाय वितनो शरीर को सामर्थहु घटत जायगो ऐसेई अन्न वस्त्र इत्यादिक की सत्ता जब निकल जाय तब वह यथार्थ पहिले वह जैसो रह्यो तैसो काम को नहीं रहे चीनी लौन में मिठास तथ खारपन जोहे वही वाकी सत्ता है सो न रहे तो चीनी ते मि स और लोन ते खारपन को स्वादहु न आवे और बनस्पति में जब सत्त नहीं रहे तब वह जाको जो गुण है सो नहीं करे पृथव निर्सत्त हो जाय तो अन्न नहीं उपजे साहुकार महाजन सत्ता अपनी छोड़दे तो उनको वेपार न चले वेईमान कहावे समुद्र त्त छोड़ दे तो प्रलय

हो जाय तारा गण की सत्ता छुट जाय तो अधोगति को प्राप्त होयं सत्ता है सो भगवान की एक शक्ति है याही करके सब पदार्थ यथायोग्य अपने २ नियत स्थानत: कार्य में यथा स्थित बलवान बने रहत हैं ॥

॥ श्लोक ॥

सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः ।
सत्येन वायवोवान्ति सर्वंसत्ये प्रतिष्ठितम्॥

अर्थात् सत्यही करके पृथ्वी ठहरी है और सत्यही करके सूर्य्य तपे है सत्यही करके वायू बहे है याते सब सत्यही करके स्थित है। ऐसेही स्त्रीन में पतिव्रत धर्म करके सती होवे की सत्ता रहत है अग्नि में दाहत्व की सत्ता करके जरायबे को सामर्थ रहत है याही प्रकार प्रत्येक मनुष्य में अपने २ धर्म की सत्यता करके यथास्थित सत्ता और सामर्थ रहत है सत्यता छोड़े ते वा धर्म ते च्युत हो जाय है और अधर्मी कहावे है फेर जो वा धर्म को फल और जो वा में सामर्थ है सो नहीं होय हरिश्चंद्र की कथा प्रसिद्ध है जो आपत्य काल में स्वपच के बिकाए और उनकी स्त्री मर्यो लड़का ले स्मशान में आई परन्तु अपने मालिक को कर लिये बिना अग्नि संसकार को करवे नहीं दियो और यद्यपि अपने स्त्री और लड़का को पहिचान्यो तथापि अपनो सत्तधर्म नहीं छोड़्यो निदान भगवान प्रसन्न भये और लड़का जी उठ्यो और सब अपनो राज पाछो पायो सो या प्रकार नल प्रिय व्रत इत्यादिक सतधर्मी राजान की कथा पुराणादिकन में

कही है । ताते मनुष्य अपनो सत्तधर्म न छोड़े तो भगवत प्रसन्न होयं और विपत्ति आदि सब संकट दूर हो जाय सत्ता छोड़े हत्या हाथ प्रसिद्धही है ॥

॥ दोहा ॥

सतियासत्त नहीं छोड़िये, सत छोड़े पत जाय।
सत्त की बांधी लक्ष्मी, फेर मिलेगी आय ॥

याते मनुष्य को अवश्य सतभाषण सत्मारग सत्संग सत्कर्म में ही प्रवर्त रहनो योग्य है। "सत्यचेत्तपसाचकिम्" सत्त से अधिक और तपस्या कहा है । याते मन तूं सत्त के ही संग की चाहना कर ॥

॥ प्रसंग १८ कपटी और खल के विषय में ॥

जा बन में चंदन को वृक्ष रहै है तहां आस पास के सब वृक्ष चंदन सरीखे सुगंधित हो जायं हैं परन्तु बांस के वृक्ष में चंदन की सुगंध प्रवेश नहीं करे काहे जो बांस में तीन दुर्गुण भारी है एक लंबो है दूसरे पोलो है तीसरे पोर पोर में गांठ है याही प्रकार भगवत जन को सत्संग और उपदेश खल और कपटी मनुष्यन को नहीं लगे सो खल और कपटी अपने अहंकार करके लांबे है इनते दीनता नहीं होय और एक कान ते सुने दूसरे ते निकार दें इन में उपदेश ठहरे नहीं सोही पोल है और जैसे बांस के पोर पोर में गांठ रहत है तैसे खल कपटिन के भीतर छल छिद्र कपट मत्सरता इत्यादिक बनी रहत है सो गांठ है याते कह्यो है ॥

॥ दोहा ॥

नीच निचाई ना तजे,
साधनहु के संग।
जैसे चंदन विटप बस,
बिन बिष भयो न भुजंग ॥१॥

अर्थात् साधु जिनको सरल भाव है तिनके संग करकेहु नीच जो कपटी और खल सो नीचता को नहीं छोड़े जैसे सर्प चंदन के वृक्ष में रहे केहु विष को त्याग नहीं करे॥ जैसे यह श्लोक में कह्यौ है॥

॥ श्लोक ॥

अन्तःसारविहीनानामुपदेशो न जायते।
मलयाचलसंसर्गान्न वेणुश्चन्दनायते ॥१॥

अर्थात् जिनको अंतःकर्ण शुद्ध नहीं तिनको उपदेश नहीं लगे। जैसे मलयाचल के संसर्ग करकेहु बांस को वृक्ष चंदन नहीं होय। ताते कपट और खलता और धूर्तता इत्यादिक को त्याग शुद्ध मनतें मनुष्य भगवत भक्तन को सत्संग करे तो अवश्य फलदायक होय। याते कपट त्याग निष्कपट रहनो॥

॥ प्रसंग १९ लौकिक बासना के विषय में॥

जैसे पशु जिभ्या के स्वाद के लालच ते पिंजरान में फंसे जाय हैं वह लालच में उनको परबस होयवे और अनेक दुख

भोगवे को भय नहीं रहै ताही प्रकार सकाम कर्म करवे वारे मनुष्य भगवत को भूल अपने लौकिक सुख की वासना ते माया के फांस में पड़े हैं। सो कामना ही बंधन है ॥

॥ प्रसंग २० मत्सरता के विषय में ॥

भगवत भक्त और भगवदीन की उत्कृष्टता और गुण को देख खल लोग वहां लौं पहुंचे तो नहीं परन्तु असही मान मिथ्या दोष लगाय अपनो संतोष कर लेहै जैसे एक लोमड़ी हरे हरे अंगूर के झोपा लटकते देखि उछल कूद लेवे कों बहुत जोर मार्यो परन्तु पायो नहीं निदान हार के कहत चली गई जो यह अङ्गूर खाटे हैं ॥

॥ श्लोक ॥

दह्यमानाःसुतीव्रेण नीचाः परयशोग्निना।
अशक्तास्तत्पदंगन्तुंततोनिन्दांप्रकुर्वते॥१॥

अर्थात् उत्तम जन के यश को देख नीच जन उनके दरजा को पहुंच तो सके नहीं तब जल करके निन्दा करवे लगे हैं॥

प्रसंग २१ गुणग्राही और दुर्गुणग्राही के विषय में

जैसे हंस मोती ही चुगे है और दूसरो दाना वामें मिल्यो होय तो वाको छोड़ देत है और क्षीर में ते दूधही पी जाय है और नीर को नहीं ले तैसे गुणग्राही जो हैं सो सज्जन के गुणही को ग्रहण करि लेत हैं उनकी दुर्गुण में दृष्टि नहीं

रहे और जो दुर्गुणी हैं उनकी गुण की ओर दृष्ट नहीं दुर्गुण ही की चाहना करे है जैसे ॥

॥ दोहा ॥

दोषइ कोउमहै लहै, गुण न गहै खल लोक।
पिये रुधिर पै ना पिये, लगी पयोधर जोंक।१।

जैसे जोंक को स्तन में लगावे तोहू दूध को नहीं पीये रुधिरही को पीयेगी ऐसेही दुर्गुणग्राही लोग होय हैं गुण को त्याग सर्वदा अवगुण ही लेत हैं जैसे कह्यो है—मधुपा: सुगन्धमिच्छन्ति व्रणमिच्छन्तिमक्षिका: ॥ भ्रमर जो है सो सुगंध ही को लेत है और मक्षिका घाव और रुधिर देखि जाय कै बैठे है ॥

॥ दोहा ॥

उत्तम गुण को लीजिये, जदपि नीच पै होय।
पस्यो अपावन ठौर में, कंचन तजत न कोय।१।

याते मनुष्य कों सर्वथा उत्तम वस्तु के ग्रहण करवे में दृष्टि राखनी उचित है। सो यह दुर्गुण छोड़ गुणग्राही हो ॥

॥ प्रसंग २२ कठोरता और हिंसक के विषय में ॥

जिनके हृदय में कठोरता है उनकी तामसी प्रकृती बनी रहे है और वैसेही उनकी कृपा है और दूसरे को दुख देवे में सदा निर्भय और निर्दई रहत हैं सो कठोरता हु एक आसुरी जीव को लक्षण है उनके हृदय ते भगवान को स्वरूप

भूल्यो रहे है जैसे राचसादिकन को हृदय कठोर रहे है तैसे जो पुरुष कठोर हैं सो वाही राचस के समान हैं परबत पाषान करके कठोर है सो टांकिन ते तोड़यो जाय है तैसे जिनको हृदय पत्थर है उन पर बज्रही पड़े है काष्ट में कठोरता है सो कुलाढीन सो काट्यो जाय है लोहा में कठोर धर्म है सो आग में विशेष कर के जरायो जाय है और अनेक प्रकार करके अग्नि में गलावे है सोई मानो वाके कठोरता की जाचना है और देखो मोम को हृदय कोमल है तो वाकी जातनाहू इतनी कोई नहीं करे केवल आंच देखाय अथवा धूप में रख लोग अपनो काम वाते निकास लेत हैं सो कठोरताहु एक जड़ता को कारण है हिंसा आदिक दुष्ट कर्म कठोरता तेही होय है जैसे—एक पांच बरस को लड़का जहां पच्छिन के छोटे २ बच्चान को देखे तहां ते वाको पकड़ लाय वाको दुख दे और चेंटा चेंटी माखीन को देखे तो सब को कुचल डाले सो कोई दयावान लड़का वाके यह दुष्कर्म देख वासो कह्यो है दुष्कर्मी लड़के यदि तोकों कोई दुष्ट पकड़ ले जाय तो तेरे मा बाप को कितनो दुख होयगो तैसे ये पच्छिन के बच्चान को तू पकड़ ल्यावे है तो इनके मा बाप को कितनो दुख होतो होयगो और एक सूच्छमदर्शी कांच वाके हाथ में देके देखायो जो तू यह चींटा चेंटी माखी छोटे २ जीव को कुचल डारे है सो देख वे कैसे तलफ २ के प्राण देहै तेरे तो सहज खेल है और उनको तो याही कष्ट में प्राण जायें हैं यदि तोसो बलवान तोको या रीत सो मारे तो तू कैसो छटपटायगो और कितनो दुख तोकों होयगो ताते यह कठोरताको टेब तू सर्वथा छोड़ दे सो यह सुन के वाको पराये

दुख को ज्ञान भयो तब यह दुष्ट कर्म करनो छोड़ दियो ताते वेद में कह्यो है ॥ 'अहिंसापरमोधर्मः' अर्थात् जीव की हिंसा नहीं करनी सो परम धर्म है ॥ याते हिंसा करवे वारे को हृदय कठोर हो जाय है उनमें दया नहीं आवे और जीव में दया राखि प्रभु प्रसन्न है याते कठोरता नहीं राखनो ताही में मनुष्य को भलो है ॥

॥ दोहा ॥

बकरी पाती खात है, ताकी काढी खाल ।
जो बकरी को खात है, वाकी कौन हवाल॥

॥ प्रसंग २३ दया के विषय में ॥

जिनके हृदय में दया है उनको हृदय अति कोमल होत है और हृदय है सो भगवत के विराजवे को स्थान है सो कोमल हृदय होय तहां भगवान प्रसन्नतासो भगवद भक्त अति दयावान होय है वे काहु को कदापि दुख नहीं दें काहे जो प्रभु आप दयासिंधु करुणासागर कृपानिधान पर दुखभंजन हरि अर्थात सर्व दुख हर्ता इत्यादिक नाम करि जगत में विख्यात है श्री आचार्य चर्ण महाप्रभु आप दया करी भूतल पर प्रगट होय दैवि जीवन को उद्धार किये और अपने भक्तन कोहु दयालु सुभाव देख प्रसन्न होत है और नीत इत्यादि मेंहु कह्यौ है ॥

॥ श्लोक ॥

क्षान्तितुल्यंतपोनास्तिसंतोषान्नपरंसुखम्।

नचतृष्णापरोव्याधिर्नचधर्म्मोदयापर

अर्थात् शान्ति समान और तप नहीं संतोष समान सुख नहीं तृष्णा समान व्याधि नहीं और दया के ऊपर धर्म नहीं औरहु ॥

॥ श्लोक ॥

दानंदरिद्रस्यप्रभोश्चशान्ति
र्यूनां तपो ज्ञानवतां च मौनम् ।
इच्छानिवृतिश्चसुखासितानां
दया च भूतेषु दिवं नयन्ति ॥१

अर्थात् दरिद्री को दान सामर्थ को शान्ति जवान तप ज्ञानी को मौन रहनो और सब भोग के पदार्थ जिनकी इच्छा नहीं चले सो सबको स्वर्ग की प्राप्ति है जिव में दया राखि प्राणी मात्र को स्वर्ग मिले है अर्थात होत है ॥

॥ दोहा ॥

दया धर्म को मूल है, नरक मूल अभिमान
याते दया न छोड़िये, जब लग घट में प्राण

याते जीव मात्र में मनुष्य को दया राखनी अवश्य च दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता में बिट्ठलदास के प्रसंग में त कुजडी के प्रसंग में जो खवासने आज्ञा किये वाको ज

को बहुत बरज्यो पर वाने वैष्णव धर्म छोड़्यो नहीं तब
बाप ने शेरशाह पादशाह से फरियादी करी तब पादशाह
ा लड़का कों बुलाय अनेक भांति समुझायो कि तू
क छापा लगावनो और यह धर्म को छोड़ दे तब वा
ा ने कह्यौ जो दुनिया में कोई ते प्रीति करे है सो
ले लोग हैं सो नहीं छोड़े और यह तो मैंने अलौकिक
ते प्रीत करी है सो कैसे छोडूं आप को जो प्यारो
वाको आप कैसे छोडेंगे तब बादशाह ने अपने नौकरन
हुकुम कियो कि मेरो तरवार ल्याउ सो तरवार ल्याय
र किये सो तरवार ले वाको धमकायो जो तू यह वेष
धर्म नहीं छोड़ेगो तो तरवार मारोंगो तब वाने कह्यो
पि यह नहीं छोडूंगो तब बादशाह ने वह तरवार
हाथ में देके कह्यो जब मैं सोऊं तब तू मेरे पलंग को
ा दीजियो तेरो धर्म सांचो है मैं तोसो प्रसन्न हों
र्म के विषे टेक राखे धर्मज्ञ रह्यो और लाभहू भयो
ो घंटा करण की कथा पुराणादिक में प्रसिद्ध है जो
देव जी को उपासक रह्यो कानन में घंटा बांधे रहतो
में विष्णु को नाम न सुने सो महादेव जी अपनो अनन्य
क जान कृपा कर विष्णु के पास पठायो जो आप या पर
पा करिये तब विष्णु वाके उपासना की टेक देखि प्रसन्न
ाय मोक्ष दियो सो या प्रकार सांच धर्म के विषे टेक राखे
ो भगवान अवश्य कृपा करेंहींगे ॥

प्रसंग २५ बिबेक और बिचार के विषय में।

मनुष्य को प्रत्येक कार्य तथा वस्तु में बुद्धि करके बिबेक
और बिचार राखनो उचित है ॥

॥ श्लोक ॥

केवलंशास्त्रमाश्रित्यनकर्तव्योविनिर्णयः ।
युक्तिहीनविचारेणधर्महानिःप्रजायते॥१॥

केवल शास्त्रही को देख वाको निर्णय न विचार कोई कार्य करनो उचित नहीं काहे जो युक्तिहीन विचार करिते धर्म की हानि होय है। जैसे कोई अजीर्ण करके ज्वरते पीड़ित वायु के जोर में खायबे और पीबे को जो दे तो वाको पीड़ा अधिकही बढ़ेगी औरहु दुख होयगो तहां कठोरता है सोही दया है जाते वाको दुख निवर्त होय ऐसेही झूंठ बोलनो सर्वथा अधर्म है परन्तु वा ठिकाने नहीं जहां केवल सांच बोलेतें व्यर्थ कोई की जान मारी जाय है अथवा कोई म्लेच्छादिक अपनो धर्म लेत है और आप निबल है और सांच कहिते धर्म जात है तो वा सांचते झूंठ भलो है काहे जो झूंठ बोलबे को जो दोष वा ठिकाने अति निर्बल है और कोई के प्राण रक्षा और अपने धर्म राखि को जो पुण्य सो बलवान है सो थोड़े निर्बल दोष को बड़ो बलवान धर्म मिटाय देत है ऐसेही बालकन को तथा स्त्रिन को अथवा मूर्खन को कोई खोटो काम करबे ते रोकबे के लिये अथवा विद्या पढ़बे अथवा सत्मार्ग में चलबे के लिये झूंठ लालच तथा भय देखाय शिक्षा करें हैं वह झूंठ बोलनो कोई के दुख को कारण नहीं किन्तु उनके भले के अर्थ है अन्तष्करण तें वा पुरुष की उपकार बुद्धि ही रहे है कदापि वाके बिगाड़ में नहीं शिक्षा करबे वारे को वा समे में झूंठ को बोलनो अधर्म को कारण नहीं किन्तु उनको अभिप्राय धर्म में लगावे के निमित्त केवल

ऊपरते झूंठ को कहनो है भीतर सत्यता को धर्म भयो है जैसे माटी के घड़ा में सुवर्ण भरके कोई को देनो ऊपरतें तो माटी झलके भीतर में वाके पदार्थ है परन्तु अधर्म भयो झूंठ बोलबे को सर्वदा निषेधही है याही प्रकार सर्व कार्य में विवेक और विचार अवश्य हैं ऐसेही विषय को त्याग है परन्तु यह नहीं जो विवाह करके स्त्री को घर में ले आये फेर वाके संग भोग न करनो लोभ को त्याग है तहां यह नहीं जो चोर अपने कपड़ा बरतन ले जात देख वाको रोकनो नहीं अथवा वाकी चौकसी न राखनी मोह को त्याग है पर यह नहीं जो स्त्री लड़का अपने आज्ञाकारी हैं उनते संभाषण न करनो उनको मुख न देखनो ऐसेही क्रोध करनो मने है परन्तु यह नहीं जो कोई अपने को व्यर्थ दो धौल मार जाय अथवा गारी दे तो वाको धमकोहु नहीं दोनों वा भयहु नहीं देखावनो ऐसो विचारे तो जगत में निर्वाहहु न होय जैसे यह सर्प को दृष्टान्त है। एक सर्प मारग में बैठ्यो जो आवे ताको काटे एक दिन कोई साधु वा रस्ता सो आयो सो सर्प फुफकार मार वा साधु को काटबे दौड़्यौ तब साधु ने कह्यो हे सर्प तूं कौन अपराध करके ऐसी जोनी पाई है अबहूं तू नहीं चेते जो लोगन को काट उनको प्राण लेत है ताते अब तेरी कहा गति होयगी तासो तू ऐ दुष्ट कर्म को छोड़ दे सो सुन के वह सर्प को ज्ञान भयो सब को काटनो छोड़ दियो तब सब लड़का वा सर्प की पूंछ पकड़ २ के घसीटबे लगे सो दिन भर घसीटबोई करें पाछे कछु दिन बीते वह साधु वा रस्ते फेर आयो और वा सांप को दख्यौ जो सब लड़का मिलके कांटा में घसीटे हैं और दुर्दसा करत हैं तब साधु

ने कह्यो अरे सर्प यह कहा तेरी दसा है तब सर्प ने कह्यो जो तुमने काटवे को नाहीं करी तासों येह मेरी दसा भई है तब साधु ने कह्यो जो मैंने काटवे को नाहीं करी हती के फुफकार हु मारवेको नाहीं करी हती ताते विना विचारे जो करे फिर पाछे पछताय ॥ कहुं तो धर्म को अधर्म बन जाय अधर्म करे धर्म हो जाय याते बुद्धि करके विवेक विचार के साथ मनुष्य को अपनो स्वधर्म और करतव्य होय सोई करनो कोई के देखा देखी बिना विचारे नहीं करनो चहिये जहां विवेक विचार नहीं है तहां रांधा रूपा रूई धुंई स्वेत स्वेत सब एक समान कहे जाय हैं ॥

।प्रसंग २६ मूर्खता और मूढ़तादि के विषय में।

मूर्ख लोग अपने कार्य की हानी आप अपने हाथ सो करे हैं उनके भले के लिये कोई उनको उपदेशहु करे तो वा बात को सोच विचार न करके अपने मन में यही जाने है जो याने कछु लेने अथवा अपनें स्वार्थ के अर्थ कह्यो है और अपने बुद्धि और समझ के आगे केतेहु बुद्धिमान और पण्डित होय उनकी समझ को बेसमझ समझ के उनकी बात न मान अपने विषे में विशेषता जान उनके गुण को कदापि न ग्रहण करेंगे ॥

श्लोक ॥

पण्डिते च गुणाःसर्वे मूर्खे दोषाहि केवलम्।
तस्मान्मूर्खसहस्त्रेषुप्राज्ञएकोविशिष्यते॥१॥

अर्थात् पण्डित कहा जो बुद्धिमान ज्ञानमान उनमें सर्व प्रकार

गुणही रहे हैं और मूर्ख में केवल दोष जो दुर्गुण सोही रहे हैं ताते हजार मूर्ख में एक भी पण्डित ज्ञानमान है सो अधिक बलवान है ॥ और हु—

श्लोक ॥

मूर्खेनियोज्यमानेतुत्रयोदोषामहीपते: ।
अयशश्चार्थनाशश्चनरकेगमनं तथा ॥

अर्थात् मूर्ख में तीन दोष रहे हैं १ अपयश २ अर्थनाश और नरक बास ॥१॥ सो मूर्खन को समुझावनो कठिन है याहीते नीति शास्त्र में कह्यौ है ॥ (सर्वस्यौषधमस्तिशास्त्रविहितंमूर्खस्यनास्त्यौषधं) ॥ सब को उपाय अर्थात् औषध शस्त्र में है मूर्खन को औषध नहीं ॥ जैसे यह—

सोरठा ॥

फूले फले न वेत, यद्दपि सुधा बरषे
जलद । मूरख हृदय न चेत, जो
गुरु मिलहि विरञ्चि सम ॥ १ ॥

अर्थात् मेघ जो है सो यदि अमृत की हु बरषा करै तोहू वेत जो है सो कदापि फूले फले नहीं एसेही ब्रह्मा जी एसे गुरु भी मिलें तो भी मूर्ख जन को हृदय नहीं चेतनो है ॥ सो मूर्ख मूढ़ जड़ इत्यादिक अज्ञानीही की परिभाषा है उनको अपने लौकिक अलौकिक कोई कार्य के हानि लाभ को ज्ञान नहीं जैसे यह प्रसंग है एक मूढ़ ने सुन्यो जो रुपैया देखि

रुपैया आवे है सो अपने धनवान पड़ोसी के घर में जहां रुपैया धरे रहते सो एक अपनो रुपैया हाथ में ले वा कोठरी के मूका में हाथ डार अपने रुपैया को रुपैया दिखावन लाग्यौ सो वाको रुपैया हाथ से गिर्यो सो वह पड़ोसी के घर में रुपैयान में छटक के जाय मिल्यो तब रोवे लाग्यो कि रुपैया देख हाथ कोहु रुपैया पास ते गयो पर हाय मेरे हाथ को रुपैया देख मोसो न आय मिल्यो बहुत में जायके वोहु मिल्यो सो मूर्ख जन तृष्णा के बस होय जो अपनो सर्वस्व धन और अनमोल जो मनुष्य तन सो वे व्यर्थाही गंवावे है ताते कह्यो है--

मूढ़ जहीहिधनागमतृष्णां ॥
कुरुतनुबुद्धिमनःसु वितृष्णाम् ॥ १ ॥

अर्थात् हे मूढ जल्दी धनागम की तृष्णा को त्याग कर ॥ सूक्ष्म बुद्धि ते मन को तृष्णा रहित करो ॥ औ सत उपदेश कर्ता गुरुन की आज्ञा न माननी और सत्ग्रंथ और बड़ेन के वाक्य पर विश्वास न राखनो और अपने उत्पन्न कर्ता मालिक को न जाननो और आगम के लिये सोच विचार न करनो याते अधिक मूर्ख और मूढ कौन है सो मूर्खन के संगति ते मनुष्य को दूरही रहवे में भलो है जैसे यह नीति में कह्यो है

॥ श्लोक ॥

वरंपर्वतदुर्गेषु भ्रान्तं वनचरैः सह ।
नमूर्खजनसंसर्गःसुरेन्द्रभवनेष्वपि ॥ १ ॥

अर्थात् बड़े दुर्गम्य परवत में वा बन के चरवे वारे पशुन के संग

फिरना अच्छा है परन्तु इन्द्रासन ऐसे घर में मूर्खन के संग कर के रहना नहीं अच्छा याते मूर्ख और मूढ वही हैं जो सतसंग करके हू नहीं चेते और अपनी हठ को नहीं छोड़े जैसे नीम के वृक्ष मो चीनी ते सीचन करो तोहु अपने कड़वाहट नहीं त्यागे और अन्ध दीपक तहु नहीं देखे ॥

॥ प्रसंग २७ ज्ञान के विषय में ॥

मनुष्य को या बात विचारनो आवश्यक है जो मैं कौन हों कहां ते आयो हों और कौन ने उत्पन्न कियो है और यह जगत कहा है और भगवान कौन है और अब कहां जाउंगो और मोको कर्तव्य कहा है या बात को विचार करि जाननो सो ज्ञान जैसे मैं भगवद अंस हों भगवान को दास हों भगवान ने मोको उत्पन्न कियो है कोई अपराध ते अविद्या करके भगवान ते जुदो पड़्यो हों जगत है सो सत्य है और हम ममता अर्थात् यह मेरो यह तेरो जो संसार सो स्वप्नवत् है असत्य है और भगवान सर्वत्र और सर्व काल में स्थित है और जीव सदा आवागमन में पड़्यो रहे है और भगवान जो हैं सो मेरे स्वामी हैं और मैं उनको दास हों और भगवत् की सेवा और स्मर्ण यही मोको कर्तव्य है जाते संसार ते निवर्त होय भगवत स्वरूप की प्राप्ति होय और आवागवन ते छूट अनेक दुख भोगवे ते रहित होकर सदा अलौकिक आनन्द में प्रवेश हो जाय सो जो या बात को सोच विचार नहीं करें वही अज्ञानी हैं ॥

॥ दोहा ॥

पथ अरु वाकी रीति से, हो जो पथिक अचेत

वह नहीं पहुंचत हैं कभी, अपने इष्ट निकेत॥१॥

औरहु—

॥ श्लोक ॥

आहारनिद्राभयमैथुनानि
समानि चैतानि नृणां पशूनाम्।
ज्ञानं नराणामधिको विशेषो
ज्ञानेन हीनः पशुभिः समानः॥१॥

अर्थात् अहार निन्द्रा भय मैथुन ये सब मनुष्यन को और पशून को एक समान बरोबरी है परन्तु एक ज्ञान मनुष्य में विशेष है सो जो मनुष्यन में ज्ञान नहीं सो पशू ही समान है॥

॥ श्लोक ॥

प्राप्ताः श्रियः सकलकामदुधास्ततः किं
दत्तं पदं शिरसि विद्विषतां ततः किम्।
संमानिताः प्रणयिनो विभवैस्ततः किं
कल्पस्थितं तनुभृतां तनुभिस्ततः किम्॥१॥

अर्थात् क्षण भंगु देहधारी जो मनुष्य ने काम धेनु सी लक्ष्मी पाई तो कहा। शत्रु के माथे पग धर्यो तो कहा धन ते मित्रन को सन्मान कियो तो कहा। या देह सो कल्प भर जीये तो कहा॥ भगवत स्वरूप को ज्ञान नहीं और पर-

लोक न बनायो तो कछु नहीं ॥ और श्री गुशाईं जी के वाक्य हैं ॥

॥ श्लोक ॥

कः कालः कानि मित्राणि
को देशः कौ व्ययागमौ ॥
कश्चाहं का च मे शक्ति
रितिचिन्त्यं मुहुर्मुहुः ॥१॥

अर्थात् यह कौन काल है और कौन मित्र हैं कौन देश है और कहा मोको व्यय और लाभ है और मैं कौन हों कितनी मेरे में सामर्थ्य है इत्यादिक मनुष्य को अहर्निश यह सोचते रहनो ॥

। प्रसंग २८ ईर्षा द्वेष इत्यादि के विषय में ।

ईर्षा कहा जो औरकी उत्कृष्टता देख सहन न करनो और द्वेष कहा जो और को बूरो चाहनो जामें वाकी न्यूनता और हानि होय सो ईर्षा और द्वेषी स्वभाव वारे और दूसरे की बड़ाई और आछोपन देख व्यर्थ अपनो लोही जराय अपराध को टोकरा माथे धरे है और ईर्षा और द्वेष करवे वारे मनुष्य की उन्नति कदापि नहीं होय काहे जो उनके मन की भावना सर्वदा दूसरे के न्यूनता ही में लगी रहे है उनके गुण के ऊपर दृष्टि नहीं कि उनके गुण को ग्रहण करें वे ऐसो नहीं चाहें कि इनके जैसे गुण मेरे में भी होय वह येही चाह्यौ करे है जो कोई प्रकार ते इनकी उत्कृष्टता और चाहना मिट जाय और

सर्व प्रकार करके याकी हैठी होय ताते ईर्षा करवे वारे कोहु उत्कृष्टता नहीं होय काहे जो याको अन्तष्करण सदा दूसरे के बुराई की चाहना में प्रवर्त रहे है सोही याके आगे आवे है ताते इनको भलो कबहु नहीं होय और दुखही में जन्म व्यतीत होय है जैसे एक स्त्री अपने पड़ोसिन को बहुत लड़का देख ईर्षा करके भगवान ते नित्य मनायो करे कि याको लड़का मर जाय सो भगवत इच्छा ते वाही को लड़का मर गयो तब जल भून करके कहवे लगी जो भगवान को न्याव करवे नहीं आयो परन्तु अपने दुष्ट स्वभाव को दोष नहीं विचार्यो कि में जो और को व्यर्थ बुरो मनावत रही ताते मेरो बुरो भयो जैसो बीज लगायो वैसो फल पायो और जो भगवद भक्तन की ईर्षा और द्वेष करे है सो सर्व प्रकार नष्टता को प्राप्त होत है प्रहल्लाद जी को द्वेष कर हिरणकश्यप के प्राणही गये बिभीषण के द्वेष करके रावण को नाशही भयो पाण्डवान की ईर्षा दुर्योधन ने करी सो राज कुटुम्ब सब बिलवायो और यहां चौरासी वैष्णव की वार्ता में रामानन्द पण्डित ने नेक श्रीमहा प्रभुन के वैष्णवन की ईर्षा विचार्यो सो आपने रामानन्द को त्यागही कियो और सहस्र जन्म परियन्त को अन्तराय भयो ताते भगवद भक्तन को जो ईर्षा और द्वेष करे है सो भगवान ते कभी सह्यो नहीं जाय भगवान अपने द्वेषीन पर क्षमा करे हैं परन्तु अपने भक्तन के द्वेषीन को सर्वथा दण्ड देतही है सो शास्त्र पुराण में प्रसिद्ध ही है सोई परमानन्द दास जी ने गायो है ॥ (यह ब्रत माधौ प्रथम लियो ॥) जो प्रानी भक्तन को दुखावे ताको फाड्यो नखन हियो ॥) ताते मनुष्य को काहूते ईर्षा द्वेष नहीं राखनो ॥

॥ दोहा ॥

पर सुख संपत देख सुन, क्यों जरे बिनु आग।
याते तेरे भाग ते, गई भलाई भाग॥

॥ प्रसंग २९ संफ और सम्मत के बिषय में।

मनुष्य अपने में परस्पर संफ राखे ते जो कार्य बिचारे सो सब कर सके है॥

॥ दोहा ॥

मता एक में होय तो, पुरुष दोय सज्ञान।
डारे खोद पहाड़ को, सोमित गर्त समान १॥

और दूसरो कोई उनको कदापि दबाय नहीं सके और सदा बलवान और शत्रू ते निर्भय बने रहे हैं काहे जो वे अपने में परस्पर ऐक्यता करके बलिष्ट हो जायं हैं ऐसेही प्रजा में परस्पर संफ होय तो राजा को कछु बस न चले राजा और प्रजा में परस्पर संफ होय तो दूसरो राजा वाको राज नहीं ले सके ऐसेही अपने धर्म संबंधी सुजातो में परस्पर संफ होय तो दूसरे अन्य मार्गी तथा धर्म द्वेषीहु को कछु नहीं चल सके आपुस में संफ और संमति करके रहनो यह बड़े सुख और प्रवलता को कारण है और परस्पर विरोध राखे ते और आपुस की फूट ते मनुष्य सर्व प्रकार निर्बल हो जात है और याते सर्वथा सुख की हानि होत है और शत्रुहू दबाय लेत है जैसे यह एक प्रसंग है जो एक खेती

करवे वारो मरती समे सब अपने लड़का और परिवार को बोलाय दस वीस जव की साटान को एकट्ठो एक में बांधि सब लड़कान के हाथ में दियो कि याको तुम तोड़ डारो परन्तु काहू ते न टूट सक्यो फेर वा साटान को खोल जुदी कर एक २ साटान को सब के हाथ में दियो और कह्यो जो अब याको तोड़ो सो सब ने सहजही में तोड़ दियो तब वह वृद्ध ने कह्यो याही प्रकार तुम सब अपने में परस्पर संफ राख मिले रहोगे तो सुखी रहोगे तुमारी शत्रू अथवा कोई भी तुमारो कछु बिगाड़ नहीं सकेगो और विरोध करके आपुस में फूट करोगे तो दुख पाओगे शत्रू भी दवाये लेंगे और अर्थ की हानि होगी ॥

॥ दोहा ॥

जहां सुमति तहं संपति नाना ।
जहां कुमति तहं बिपति निदाना ॥

और ऐसेही आपुस में संफ करके भगवत सेवा भजन करैं तो अधिक आनंद सब को प्राप्त होय सो संफ और सम्मति करके लौकिक अलौकिक दोहुन में सुख उपजे है जहां ताई होय अपने हृदय ते विरोध को दूर कर सबते मेल राखे भलो है जैसे पटवा को धागा जब ताई बिखर्यो जुदो २ रहे असामर्थ और निवल रहे है सब तोड़ सके जब एकठो जेवरी बन जाय तब बाते हाथी हु बंध जात है और याही प्रकार मनुष्य अपने इन्द्रिन और मन को समेट एक ठौर कर प्रभुन ते लगावे तो भगवतहु बस हो जात हैं ॥

॥ प्रसङ्ग ३० निंदक के विषय में ॥

जैसे पंदारे मेंते दुर्गंध निकल्यो करे है तैसे निंदा करवे वारे के मुख मेंते सज्जन के गुण को छिपाय अन्यथा अवगुण ही प्रगट होत रहत है और जैसे पंदारे में सुगंधित जलहू पड़े तो जल के सुगंध को छिपाय भीतर ते दुर्गंध ही निकारे है तैसे निंदक सुभाव वारो गुणी को गुण अपने कान ते सुने तोहु दुर्गुण ही करके वर्णन करे है काहे जो उनके भीतर मैल भरी रहे है वोही मुख ते निकले है और जैसे श्लोक में कह्यो है--

॥ श्लोक ॥

निन्दकाःसूकराश्चैव हरिणासफलीकृताः।
गृह्णंति निन्दिका दोषान् पुरीषं चैव सूकराः॥

अर्थात् भगवान ने निंदा करवे वारे और सूअर को भी काम ही के अर्थ उत्पन्न करे है सूअर गांव के आस पास जो मैल्यो पड़्यो रहे है ताको भक्षण कर स्वच्छ करे है तैसे निंदा करवे वारे भगवत भक्तन को दोष ग्रहण कर लेत है याते मनुष्य जो भगवद्दी और गुरुन की निंदा करे हैं सो सूकर ते हू अधिक नर्कानुगामी है यासो काहू की निंदा न करनी ॥

॥ दोहा ॥

तुमकाहू परमतहंसो जाते हंसे न कोय।
जगमें निश्चे जानियो हंसी हंसी तेहोय॥१॥

परको औगुण देखिये अपनो दृष्ट न होय ।
करे उंजेरो दीपपे तरे अंधेरो होय ॥

स्लोक ॥

खलःसर्षपमात्राणि परछिद्राणि
पश्यति । आत्मनो बिल्वमात्राणि
पश्यन्नपि न पश्यति ॥ १ ॥

॥ प्रसंग ३१ शान्त शील सुभाव के विषय में ॥

शान्त और शील सुभाव वारे आप प्रसन्न रहि और को प्रसन्न राखि हैं उनको कोई ते राग होय न द्वेष और न कोई के निंदा स्तुती ते प्रयोजन राखि उनकी प्रकृति समुद्र के समान गंभीर एक अवस्था में सदा बनी रहे है न कबहू घटे है न बढ़े न उनको शत्रू कछु कर सकि है जैसे यह प्रसंग है एक विद्वान जो वाने जन्म भर में कोई पर कबहु रीस अर्थात रिस न करी सो या कारण ते वाकी बड़ाई सर्वत्र होयवे लगी सो सुन के वाके पड़ोसी लोग ईर्षा कर यह घात में लगे जो कोई उपाय ते याको रिष चढ़ावनो चाहिये जामें याको तमोगुण उत्पन्न होय परंतु कोई उपाय चल्यौ नहीं तब वाके टहलुवा ते कह्यो जो तू कोई प्रकार ते अपने मालिक को रिष चढ़ावे तो तोको कछु रुपैया हम देहिंगे तब टहलुवा ने विचार्यो जो और तो कोई उपाय नहीं एक इनको बिछोना आछी रीत सो बिछावे ते यह प्रसन्न रहत

हैं सो आज इनको बिछवना गड़बड़ बिछाऊं तो अवश्य गुस्से होयंगे सो यह विचार वाको बिछौना गड़बड़ करके बिछायो परंतु वह विद्वान वाही पर आय सोय रह्यो कछु बोल्यो नहीं तब दूसरे दिन वाहु ते अधिक गड़बड़ करके बिछायो सो देखि वह अपने टहलुवा तें कह्यो कि आज तू ने बिछवना ऐसो क्यों बिछायो है मैं जानु हों साईत तोको यामें अधिक श्रम पड़े है तब टहलूने कह्यो मैं आज आछी भांत बिछायवो भूल गयो फेर तीसरे दिन वह टहलू चाकर ने और हु बहुत गड़बड़ करके बिछायो जा में आज इनको अवश्य रोष चढ़ैगो सो वह विद्वान बड़े शान्त सुभाव को आय बिछौना देख हलबेते वा टहलू को इतनो ही कह्यो जो तूं औरन के कहे ते मेरो सुभाव पलट्यो चाहे है यह तो कूं योग्य नहीं मोकूं या रीत के बिछवना पर सोयबे की टेव है तब वह टहलू लज्जित होय अपने स्वामी के पांव पर गिर्यो और कह्यो मैंने लोगन के कहेते आप को बड़ो अपराध कियो है सो क्षमा करेंगे तब वह विद्वान हंसके चुप रह्यो पर उन को कोई प्रकार तमोगुण न आयो और शत्रू जो चाहत हते कि इनकी कोई रीत ते निंदा होय सो उलटि याहु में बड़ाई होयवे लगी और वे सब हार के लज्जित भये ताते शान्त सुभाव राखे मनुष्य को भलो ही है काहे जो शान्तप्रकृति है सो सतो गुणी को धर्म है सो विष्णु आप सतो गुणी हैं। विष्णु के ध्यान में पहिले ही वर्णन है ॥ (शान्ताकारं भुजग शयनं) अर्थात् शान्त है आकार जिनको ताते वैष्णव जन को हु शान्त सुभाव अवश्य राखनो चाहिये वैष्णव को भी शास्त्र न में सतो गुणी धर्म कह्यो है ऐसे ही शीलता है शीलवान

पुरुष के आगे कोई उनकी बड़ाई और अस्तुति करे तो वह लज्जा और संकोच के बोझ के मारे नीचो माथो करि जानो पृथवी में गड़े जाय है और अपने मन में जाने हैं जो यह मेरी बड़ाई करे हैं सो बात मेरे में नहीं ताते मेरे आगे बड़ाई न करे तो आछो मैं बड़ाई के योग्य नहीं हूं और जो ओछे पुरुषन के सामने कोई उनकी बड़ाई करे तो अभिमान के मारे उचिदृष्ट कर फूले नहीं समाये और अपने मन में जानेंगे कि मेरे समान कोई नहीं है और जा में अपनो स्वारथ और बड़ाई होय तो कोई को कछु उपकार करें नहीं तो बोझ नहीं और शीलवान अपनो स्वारथ नहीं विचारे जहां ताईं बने दूसरे को भलो कर देहींगे याते शीलवान के सब बस हो जाय है जैसे यह--

श्लोक ॥

मित्रं स्वच्छतया रिपुं नयबलै-
र्लुब्धं धनैरीश्वरम् । कार्येणाद्वि-
जमादरेण युवतीं प्रेम्णा समै-
र्बान्धवान् ॥ अत्युग्रं स्तुति-
भिर्गुरुं प्रणतिभिर्मूर्खं कथा-
भिर्बुधं विद्याभी रसिकं रसेन
सकलं शीलेनकुर्य्याद्वशम् ॥१॥

अर्थात् मित्र सचाई करके शत्रू नम्रता करके लोभी धन करके ईश्वर सेवा करके ब्राह्मण आदर करके स्त्री प्रेम करके भाई समता करके गुरू प्रणाम और स्तुति करके मूर्ख को कथा सुनाय करके बुद्धिवान विद्या करके रसिक रसवाती करके यह सब बस होय है परंतु एक शील करके सब ही वशीभूत हो जाय है ॥ १ ॥ (और शीलं परं भूषणं) शील जो है सो मनुष्य को परम भूषन है और शान्तता राखे मनुष्य की बड़ाई और प्रतिष्ठा है जड़ भरथ जी की कथा श्री भागवत आदिक में प्रसिद्ध है कि शूद्र लोग देवी के आगे बलिदान देवे को जड़ भरथ को पकड़ ले गये सो जड़ भरथ जी भगवत भक्त और बड़े शान्त सुभाव रहे देवी के सामने जाय खड़े हो गये सो देवी इनको तेज सहन नहीं कर सकी और वह शूद्रन को तत्काल मार डार्यो और जड़ भरथ अपने स्थान पर चले आये सो शान्त शील सुभाव सो रहनो भगवत की कृपा को कारण है ॥

॥ प्रसंग ३२ निंदा और लोकापवाद में ॥

कोई अपनी निंदा करे तो वा बात को बिचारनो चाहिये कि वह बात मेरे में है अथवा नहीं जो होय तो वा दुर्गुण को अपने में ते निकार डारनो और जो न होय तो हंस कर चुप रहनो जैसे रामचन्द्र जी की निंदा एक धोबी ने करी कि जानकी जी को लंका ते लाय घर में राख लियो सो सुनि सुनि के रामचन्द्र जी लोकापवाद और नीत ते अयोग जानि जगत के शिक्षा अर्थ जानकी जी को वालमिक रिषी के आश्रम में पठाए दियो जैसे नीत में कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

वाञ्छासज्जनसंगमे परगुणे,
प्रीतिर्गुरौ नम्रता । विद्यायां
व्यसनं स्वयोषितिरतिर्लोका-
पवादाद्भयम् ॥

और हू-

यद्यपि शुद्धं लोकविरुद्धं ना
करणीयं नाचरणीयम् ॥

याते मनुष्यन को उचित है जा में लोकापवाद होय सो नहीं करनो और अलौकिक धर्म के विषय में लोक निंदा को भय नहीं जैसे वचनामृत में प्रसंग है जो स्वमारग चलते डरिये नहीं लोक के कहे कहा लोक कछु कहो ॥

॥ प्रसङ्ग ३३ मर्य्याद शील और सभ्यता के विषय में ॥

मर्याद शील कहा जो अदब से रहनो और सभ्यतासो सभा चातुरी आदमीपनो सो मनुष्य को शृंगार है यह जामें होय सो मनुष्य सब को आछो और प्यारो लगे और सब लोग वाकी चाहना करें और जहां जाय तहां मान और प्रतिष्ठा होय जैसे बड़े को देख उठ खड़ो होनो और आगत

स्वागत करनो और अदब सों बैठनो रीत को बोलनो ढिठाई और चांचल्यता नहीं करनो और जहां जानो तहां अपने योग्य जगा देख बैठनो जा में कोई उठाय अप्रतिष्ठा न करे और अपने तें कोई को अपमान हु नहीं करनो काहे जो कोई को अपमान करनो सो प्राण मारे इतनो दोष है और जैसे यह--

॥ स्लोक ॥

प्राणस्य च परित्यागान्मानहानिर्गरीयसी ।
प्राणत्यागात् क्षणं दुःखं मानभंगाद्दिनेदिने १॥

अर्थात् मान खंडन ते प्राण को त्याग करनो भलो है क्यों जो प्राण त्यागे को दुख वही क्षण में है मान भंग को दुख दिन दिन रहत है ॥

॥ दोहा ॥

आवत ही हरखे नहीं नैनन नहीं सनेह ।
भूले तहां न जाइये कंचन वरषे मेह ॥१॥
हरषि उठे आदर करे, आवत जान अतीत ।
ऐसे जनको जानिये, परमेश्वर सो प्रीत॥२॥
याते कहत पुकार के, सुनो सकल दे कान।
हेमदान गजदान ते बड़ो दान सनमान॥
३॥ सो नीति में कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

बालो वा यदि वा वृद्धो युवा वा गृहमागतः ॥ तस्य पूजा विधातव्या सर्वत्राभ्यागतो गुरुः ॥ १ ॥

अर्थात् बालक अथवा वृद्ध वा जवान जो कोई अपने घर आवे ताको सनमान करनो चाहिये क्योंकि पाहुनो सर्वत्र श्रेष्ट है ॥ यदि अपने घर शत्रू भी आवे तो वाकी हु यथा योग्य पहुनयी करनो मुख ते बोलनो मनुष्य को उचित है देखिये जो वृक्ष की डार काटे है ताहु को वृक्ष अपने पास आयो जान दूसरी डार ते छाया ही करे है ऐसे ही सज्जन लोग गृहस्थाश्रम में रह के अथवा साधु जन जिनके पास धन नहीं है तो प्रीति युक्त बचन ही ते अतिथि जो अपने घर आवे उनको पूजन अर्थात् सिष्टाचार करे है जल आसन अर्थात् बिछोना और मधुर वाणी ये सब सत्पुरुषन के घर में कभी घटे नहीं याते अपने ते छोटे अथवा बड़े वा बराबरी वारे मित्र भाई बंधु सब को आदर सनमान करि प्रसन्न राखनो और अपने ते छोटो होय तिनहू के साथ मधुरो बोल उनको मन प्रसन्न राखनो अहंकार और कटु बचन करि कोई को मन दुखित न करनो ॥

॥ श्लोक ॥

यथाहि पथिकः कश्चिच्छाया

माश्रित्य तिष्ठति । विश्रम्य च पुनर्गच्छेत् तद्वद्भूतसमागमः ॥

जैसे पथिक राहगीर छाया को आसरो करि ठहरे है नेक विश्राम करि चल्यो जाय है वैसे ही जीव को समागम अर्थात् मिलाप है ॥ सो जहां ताईं बने अपने ते कोई को भलो हो तो होय सो कर देनो और कोई की निन्दा बुराई में न रहनो और जैसी सभा बैठी होय अथवा जैसो समय वर्तमान होय ताके अनुसार सब के प्रिय और योग्य बचन बोलनो नहीं तो चुप होय रहनो और अपने ते कोई कछु बात कहे तो धीरे में समुझ बिचार वाको उत्तर देनो जल्दी कर हड़बड़ाये और को और नहीं बोल देनो और व्यर्थबकवाद और समय विरुद्ध हु नहीं करनो और छिछोरापन करि काहू की चीज वस्तु धरी उठाय न लेनी और काहु ते कछु मांगनो तो बिचार कि बात करनो हाथी में गंभीरता है तो लोक आदर और मनुहार करि खवावे है कुत्ता में छिछोरपन है तो दुर्दुराये करि टुकड़ा पावे है चूहा व्यर्थ सब को नुकसान करे है तासो सब की गारी सुने है पीजरा में पकड़ घर के बाहर निकास्यो जाय है घोड़ा अपने सवार के सिच्छानुसार चाल नहीं चले तो डंडान सों पीट्यो जाय है और अडियलटट्टू कहाय है ढीठाई और चंचलता बांदरन में है सो सर्वत्र उनकी अप्रतिष्ठा ही होत है कोई ढेला मारे है कोई मोढो बिरावे है याही प्रकार जो मनुष्य व्यर्थ कोई को नुकसान करे है तो वाको चूहा नाईं घर ते बाहिर करि फेर घर में कोई पैठवे

नहीं दे और गुरु अथवा बड़े लोग मनुष्य के भले के लिये सुचाल चलवे को सिक्षा करें तो मनुष्य को उचित है कि वह सिक्षा पर क्रोध न करि वाको मान लेनो नहीं तो वह घोड़ा की तरे सर्वत्र अनादर ही कियो जाय है और ढीठाई और चंचलता बड़ेन के आगे करे ते वही बांदर की सी दशा प्राप्त होय है ताते मर्याद शील और सभ्यता आदमी में यह आदमीपनो है जो या रीत नहीं रहे वह निदान पशुन की तरे सो लघुताई को प्राप्त होत हैं सो सब के बड़े और स्वामी श्री ठाकुर जी हैं सो भगवत सेवा में अपराध ते भय राखनो और चंचलता इत्यादिक नहीं करनो गुरुन की आज्ञा प्रमाण चलि प्रभुन के आगे मर्यादा सो रहनो सर्वथा जीव को उचित है ॥

प्रसंग ३४ विश्वास घात और कृतघ्नता में ॥

विश्वास घात काहा जो कोई को वचन करके अथवा कायँ करके भरोसा देनो फेर वा बात को नहीं करनो सो विश्वास घात है और अपनो कोई भलो और उपकार सर्व प्रकार कियो है सो वाको यश न मान उलटि वाकी निन्दा करनी वही कृतघ्नता है और निश्चे करके विश्वास युक्त कोई को वचन देनो कि तुम को हम द्रव्य देहिंगे अथवा तुमारो कारज हम अवश्य कर देहिंगे वा अपने कोई शत्रु के भयते वा प्राण रक्षा अर्थ शर्ण में आयो और वाको जो बचन दियो है जो हम तुमारी रक्षा करेंगे और द्रव्य देहिंगे और वह नियत समय पर वाको धोखा दियो अपनो बचन न पूरो कियो तो वाकी कितनी बड़ी हानि भई कि वह मनुष्य तो वचन

देवे वारे के भरोसे दूसरी उपायहु न कर सक्यो और याके बचन पर रह के अपनो प्राण तथा धन गंवायो यह कैसी घात वाको प्राप्त भई ऐसे ही कार्य करके विश्वास घात यह जैसे कोई को कछु मिठाई इत्यादिक खावे को देनो वा में विष मिलाय अथवा जंत्र मंत्र करि वशीकरण मोहन उच्चाटन इत्यादि करिके वाको खवायो और वह खायवे वारो तो केवल मिठाई ही जाने है वाको या बात से ज्ञात नहीं जो याने यामें ऐसो कियो है अथवा अपने विश्वास पर कोई ने कोई वस्तु सौंपी और वा में नियत खोटी करी और देनो नाहीं कही निश्चे वह तो याके विश्वास पर है सो यह इत्यादिक कर्म हैं सो विश्वास घात कहे जाय हैं जितने पातक हैं सब ते बढ़ करके विश्वास घात और कृतघ्नता है क्योंकि जितने दुष्ट कर्म हैं सब मिल के एकट्ठो होय विश्वास घात बन गयो जैसे झूठ को बोलनो भी या में है कपट भी है छल भी होय गयो घात जो प्राण को वधनो अर्थात् मनुष्य को विश्वास घात ते प्राणान्त दुःख प्राप्त होत है सोह या में आय गयो सो सब पापन को राजा विश्वास घात है यदि कहो कि कोई मनुष्य को प्रतिज्ञा करके वचन दियो जैसे यह दृष्टान्त है कि धन देवे को कोई से कह्यो और फेर चोरी हो गई पास धन रह्यो तो कहां ते बचन पूरो कर सके तहां ऐसे संयोग में वह बचन देवे वारे को दोष नहीं क्योंकि जो सामर्थ करके वा ने बचन दियो वही सामर्थ वा में न रही यह दैव संयोग में वाको वस कहा जैसे कोठा पर ते गिरे नीचे कोई मनुष्य दूसरो बैठो होय वह दब के मर जाय तो वह गिरवे वारे को या में दोष कहा वा ने जान

बूझ के तो वाको प्राण नहीं लियो ऐसे ही सामर्थ रहते अ-
पनो वचन न पूरो करे तो अवश्य विश्वास घाती को पातक
ही है ऐसे ही जो कृतघ्नि है सो सर्प के समान है जैसे सर्प को
दूध पिलाय को पाले पर वह काट प्राण ही लेत है दूध पि-
यायबे वारे को उपकार नहीं माने अथवा जो डार पर मनुष्य
बैठे वाही को काटे तो कुशल कहां याके समान है अथवा जो
नाव में बैठ पार उतरे है वाहि के पेदों में छेद कर दियो तो
अंत को डूब्यो सो कृतघ्नि ऐसे मनुष्य के समान है ॥

॥ दोहा ॥

कृतघन कबहु न मानही कोटि
करो जो कोय । सरबस आगे
राखिये तोऊ न अपनो होय ॥१॥

॥ श्लोक ॥

गुरुद्रोही कृतघ्नश्च येच विश्वा-
सघातकाः। ते नरा नरकंया-
न्ति यावत् चन्द्रदिवाकरौ ॥१॥

अर्थ गुरु को द्रोह करवे वारो और कृतघ्नि और विश्वास घात करवे वारो यह सब जब ताईं सूर्य चन्द्रमा स्थित हैं तब ताईं नरक में रहते हैं ॥१॥ याते मनुष्य को सोचनो चहिये प्रभुन ने कृपा कर संसार ते उद्धार के हेत जीव को कितनो उपकार कियो है कि मनुष्य तन में जन्म और ज्ञान बुद्धि दे

अपनो मारग दिखायो और सुगम साधन भजन को बतायो सो प्रभु के चरणारविंद में विश्वास न राखै और उनके यश को गुन गान न करै तो याते अधिक विश्वास घाती और कृतघ्नि दूसरो कौन है ॥ सो सर्वदा भगवत यश मानि गुण गान करनो ये ही उचित है ॥

॥ प्रसंग ३५ परोपकार के विषय में ॥

पर उपकार बुद्धि जिनकी है सो जन दूसरे को दुख देख उन ते सहन नहीं होय जहां ताई बने है धन करके तन करके वचन करके अपने सामर्थ अनुसार दूसरे को भलो कर देत है और वा के दुख दूर करवे में प्रवर्त हो जाय है सो यह उत्तम और सत्पुरुषन के सुभाविक धर्म हैं और भगवत ने मनुष्यन में एक समान बरोबर सामर्थ सब को नहीं दियो है कोई धनवान है कोई दरिद्री कोई ज्ञानवान है कोई अज्ञानी कोई रोगी है कोई निरोगी कोई बलवान है कोई निर्बल है तो धनवान को उचित है कि निर्धन को पालन करे ज्ञानवान को धर्म है जो अज्ञानी को सिक्षा दे बोध करे निरोगी को उचित है जो रोगग्रस्त और पीड़ित है तिनको टहल करे और खबर लें बलवान को धर्म है जो निर्बल की सहायता करे सो परस्पर एक एक की जो सहायता नहीं करे सो सामर्थवान हु असामर्थ मनुष्य के समान वहु मनुष्य है और यह संसार में सर्वदा दिन बरोबर एक समान कोई को नहीं जाय है दुख सुख बढ़ती घटती सब ही को होत रहत है जो दूसरे को उपकार नहीं करे तो उनकेहु ऊपर विपत्य पड़े भगवान सहाय नहीं होंये क्यों जो भगवान ने

उनको जो सामर्थ्य दियो सो काहु के काम न आयो भगवत को दियो व्यर्थ कियो ताते जो परोपकार नहीं करे हैं तिनकी वह सामर्थ्यहू घटती जाय है किन्तु बढ़े नहीं और जो परोपकारी हैं सो आप दुःख सहें दुसरे को भलो करबे में उपस्थित होजायँ हैं याते उनपर भगवानहु प्रसन्न होत हैं ॥

॥ श्लोक ॥

एकेसत्पुरुषाः परार्थघटकाः
स्वार्थं परित्यज्यते । सामान्या-
स्तुपरार्थमुद्यमभृतः स्वार्था-
विरोधेनये ॥ तेमीमानुषराक्ष-
साः परहितं स्वार्थायनिघ्न-
न्ति ये । ये निघ्नन्ति निरर्थकं
परहितं ते के न जानीमहे ॥ १ ॥

अर्थ । सत्पुरुष वे हैं जो अपनो अर्थ छोड़ दूसरे के कार्य को साधे हैं सामान्य पुरुष वे हैं जो अपने और पराये दोनों कार्य को साधन करे हैं ओर मनुष्यन में राक्षस वे हैं जो अपने हित के अर्थ पराये कार्य को नष्ट करे हैं जो अपने व्यर्थ पराये कार्य की हानि करे हैं वे कैसे पुरुष हैं उन्हें हम नहीं जाने ॥ १ ॥ औरहु

॥ श्लोक ॥

वित्तेन किं वितरणं यदि

नास्ति दीने । किं सेवयायदि
परोपकृतौ न यत्नः ॥

अर्थात वह धन कहा जासो दीन को दुःख न हर्यो ॥ वह धर्म कहा सेयो जो परोपकार न कियो ॥ याते कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

परोपकरणं येषां जागर्ति हृ-
दये सताम् । नश्यन्ति विपद-
स्तेषां सम्पदस्युः पदे पदे ॥ १ ॥

अर्थात् जिनको हृदे पर उपकार में जाग्रित है । उनकी विपति नाश होकर उनको पद २ में संपति प्राप्त होत है ॥ १ ॥

और अठारह पुराण में दोय बचन व्यासदेव जी के निदान हैं ॥

॥ श्लोक ॥

अष्टादशपुराणानां व्यासस्य
वचनद्वयम् । परोपकारः पु-
ण्यायपापायपरपीडनम् ॥ १ ॥

जो परोपकार करनो सोही पुण्य है और को दुःख दैनो सोई पाप है ॥ याते कह्यो है परोपकारः विष्णोः प्रियः सो दया उपकार भगवत को प्यारो है और उपकार कर्ता चाहे जैसो नीच आश्रम कोहु होय तोहु लोग वाकी चाहना कर सब वाके पास पहुँचत हैं और वाकी छाया में रहि किर्तिही गावत है और जो अपकारी जन है दूसरे को दुःख देत है

तिन को लोग बुरो ही विचारत हैं निंदित कर त्याग ही देत हैं जैसे फलवान वृच्छ आम इत्यादिक जो है सो जड़ जोनी में है परन्तु वा में उपकार धर्म है जो लोग लाठी हू मारे है डाली पता हु तोड़े है अथवा भूमि के गिरे पड़े फल फूल उठाय लेत है जो वाके पास छाया अर्थात् शरण में जाय है सब को फल ही देत है और यही उपकार धरम के पुण्य ते मनुष्य यद्यपि चैतंन है तो हू वाकी टहल कर पानी सिंच आवे है और वह अपने स्थान पर स्थित बन्यो रहै है आमादिक फलवान वृच्छ को कोई काटे हू नहीं और बबूर इत्यादिक में कांटा भरे हैं सब को अपकार ही करत है कोई को कपड़ा फाडे कोई को कांटा चूभे जो जाय ताको शरण हु न मिले सो अपकारी को लोग काट के जरावत हैं कांटो अपने को चूभे है तो झट निकार के बाहर ही कर दियो जाय है दुखदाई को पास नहीं राखि जख उपकारी है तो इतनो कष्ट अपने को सहै है परंतु दुसरे सक्कर और मीसरी हो कर स्वाद को सुख देत है सो यह उपकार ते जगत में लोग वाके मिठास की कीर्ति को दृष्टान्त बड़ाई के विषे हर जगे बोलत हैं जैसे फलाने की बात में बड़ी मिठास है अथवा बोली बड़ी मीठी है कंठ बड़ो मीठो है सुभाव मीठो है ऐसी सराहना करत हैं और जो कड़वी वस्तु है वाको सब मोंढे ते थूक निकार ही देत हैं कोई वाकी चाहना नही करे मच्छिका में परोपकार धर्म है कि आप श्रम करि दुसरे को मिष्ट पदार्थ देत हैं ताते भगवान वाको सहत पंचामृत में लीयो याते कह्यो ॥

जो तू आयो जगत में सीख ऊखकी लेय।
जो तोको दुख देत है तू ताको सुखदेय॥

याते जो भगवत जन हैं वे शत्रू को हु विचार नहीं राखे सब के दुख दूर होयवे को उपकार ही कर देत हैं॥

॥ दोहा ॥

विना कहेहु सत पुरुष परकी पूरे आस।
कौन कहत है सूर्जको घर घर करत प्रकास॥ १ ॥

सो मनुष्य को या बात को विचारनो चाहिये जैसे यह—

॥ कवित्त ॥

कहां मानुष की देह कहां फिर जन्म बड़े घर। कहां बुद्धि और ज्ञान कहां सेवत अनेक नर। सुख संपत फिर कहां वंधे जो तुरी वर॥ कहां राज सनमान कहां फिर हुकुम देस पर। औसर ही मब होत है सुकृत समय विचारियो। परमारथ या जगत में वहते हाथ पषारियो॥ १ ॥

और प्रभु आप दया सिंधु करुणा सागर कृपा निधान पर-दुख भंजन हरि जो सर्व दुख हर्ता इत्यादिक नाम करके जगत में विख्यात हैं और आप श्री महा प्रभु श्रम कर प्रगट होय जीवन को उद्धार किये और भगवदी जन प्रभुन की गुण गान कर जीव के सिक्षा अर्थ उपकार कर ग्रंथ कर गये कि जो वाको पढेंगे सुनेंगे उनको संसार ते उद्धार होय भगवत धाम की प्राप्ति होयगी सो भगवत को सदा उपकार मान अपने में उपकार बुद्धि राखिये ॥

॥ प्रसंग ३६ आलस्य और कायरता के विषय में ॥

आलसी और कायर पुरुषन को मनोरथ कदापि पूरो नहीं होय आलसी को अवकाश बहोत कायर को अपार वहोत आलसी पड्यो २ विचार कियो करे है जो अभि समय बहुत है जो काम करनो है सो काल करेंगे सोच विचार करते २ काल के मुख में जाय रहे है और काम जहां को तहां धर्यो रहे जाय है तासों आज को काम काल के लिये राखनो बुद्धिमान को काम नहीं यद्यपि फेर वही को विचार के बहु-तेरो कह्यो परंतु परिणाम में वैसो न होयगो जैसे चाहिये और भले कार्य में आलस्य भलो भांत घेरे है जैसे पुस्तक को वाचनो है मित्र को पत्र लिखनो कथा वार्ता श्रवण करनो विद्या को पढ़नो सत्संग करनो इत्यादिक कोई सत्कर्म में जब मनुष्य लगे है तो आलस्य रूपी शत्रू वाको चढ़ दबावे है परंतु जो सावधान और परिश्रमि मनुष्य हैं सो वह आलस्य को

प्रास नहीं आवे हैं उन तें आलस्य दूर भागत है मन है सो गढ के समान है और आलस्य है सो शत्रू के समान जो एक बेर आलस्य कर गयो तो मानो मन के गढ़ को एक बुरुज आलस्य रूपी शत्रु ने तोड़ लियो सो एक बुरुज को तोड ले नो सब गढ़ भर को जीत लेनो है ॥ जो देर कर सवेरे उठेगो वाको काम शेष ही रहेगो यातें बड़े सवेर ही जो निंद्रा खुले झट बिछोना ते उठ बैठे तो वाकी आलस्य भाग सौ कोस जाय पड़ेगी ॥

हौले हौले चले रस्ता, सिर पर धरे दरिद्र को बस्ता। आलस्य ते शरी-र हीन, जंगते लोहा क्षीण ॥

॥ दोहा ॥

बहु निंद्रा दुख देत है बहु आलस्य को धाम। मित को भोजन सुखद है पुष्टि रुष्टि को धाम ॥ १ ॥

और आलसी अपने को मृतक समान कर संतोष की वृत्ति ले कहे है हम बड़े संतोषी हैं परंतु आलस्य और संतोष में बड़ो अंतर है वह नहीं जाने आलस्य वह है जो अपने उद्योग ते जो वस्तु प्राप्त होवे जोग है सो आलस्य कर वाको उद्योग नहीं करे जैसे कह्यो है (दैव दैव आलसी पुकारा) और सं-

तोष वह है जो अपने उद्योग करके जो प्राप्त होय ताही में भगवत इच्छा मान प्रसन्न रहे अधिक लोभ न करे ॥ उद्योगी सिंह नित नयो भक्ष खातो रहे है॥ आलसी लोमड़ी झूंठो खाय और पड़ रहे ॥ आलसी कहे है अजी अभी जीनो बहुत है जब भगवत सेवा भजन को समें आवेगो तब करेंगे ऐसे ही कायर कहे है अजि संसार ते मन निकालनो और भगवत सेवा भजन में लगावनो हम लोगन ते बन पड़नो कठिन है सो यह सोच न कभी सत्संग करे न कथा वार्ता सुने यह दोहुं दुर्गुण करके मनुष्य लौकिक अलौलिक दोऊ जगे की हानि करे है लौकिक में विद्या और धन को उपार्जन नहीं बने अलौकिक में भगवत भजन जो अवश्यक है सोहु नहीं करे सो यह आलस्य, भय, कादरता. लज्जा, प्रतिष्ठा, शंका, जुगुप्सा इत्यादिक धन उपार्जन और भगवत प्राप्ति दोनों में बाधक है ॥

॥ श्लोक ॥

तुंदिलाः सुरतारंभे नलब्धं चुंवनात् सुखम्।
इतोभ्रष्टः स्ततोभ्रष्टः चुंवनान् मैथुनादपि१

अर्थात् बड़ी तोंद वारो जब विषय में प्रवर्त होय तो वाको चुंवन को सुख मिले न मैथुन को ऐसे आलसी को न लौकिक बने न अलौकिक ॥ सो आलसी न हो ॥

॥ प्रसंग ३७ उद्योग और श्रम के विषय में ॥

भगवान ने जगत में जीव के अर्थ सब पदार्थ उद्योग और

श्रम साध्य उत्पन्न करे हैं विना उद्योग और श्रम के कोई वस्तु प्राप्त नहीं उद्योग कहा जो खोज उपाय, श्रम कहा जो मिहनत सो थोड़ो अथवा बहुत सब वस्तु में लग्यो है और भगवत इच्छानुसार यथा योग सूर्य चंद्र तारागण अग्नि वायू जल पृथ्वी जीव जन्तु पशु पक्षी जलचर वनचर सब अपने २ नियत कार्य में यथास्थित उद्योग और श्रम करवे में प्रवर्त हैं और मनुष्य भी उद्योग और श्रम करके याही ते आछी भांति कालक्षेपण और सुख सों निर्वाह कर सके है जैसे उद्योग और कर्म करे है वैसे ही गती को प्राप्त होय है जैसे यह

॥ श्लोक ॥

यात्यधोऽधोव्रजत्युच्चैर्नरः स्वैरेवकर्मभिः ।
कूपस्यखनितायद्वत्प्राकारस्यचकारकः॥१॥

अर्थात् मनुष्य अपने ही कर्म तें कूवा खोदवे वारे के समान नीचे जाय है और भीत वनावे के समान ऊपर जाय है अर्थात् नीच कर्म ते अधोगति को प्राप्त होय है उच्च कर्म ते उत्तम पद को पहुंचे है ॥ १ ॥ सो जो दुष्ट कर्म में उद्योग और श्रम करत हैं वही पाप है वाते मनुष्य को दुख प्राप्त होत है और जो सत्कर्म में उद्योग श्रम करे है सो ही पुण्य कर्म सुख देवे है और श्रम तपस्या कोहु नाम है अर्थात् जैसी जाने तपस्या करी है वैसो भोगे है याते उद्योग और श्रम विना कछु नहीं मिले जैसे कह्यो है ॥

अनुद्योगेन तैलं हि तिलेभ्यो नैव लभ्यते

कि उद्योग विन तिल से तेल कोई नहीं पाय सकै यदि कहो कि ईश्वर के इच्छा विना कुछ नहीं होय सो यथार्थ है जब भगवत सहाय होंय है तभी कार्ज सिद्ध होय है परंतु मनुष्य को भगवत ने जितनो सामर्थ दियो है तितनो पुरुषार्थ करे तो अवश्य भगवान हु वाकी सहायता करे जैसे यह—

॥ श्लोक ॥

यथाह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् । एवं पुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति ॥ १ ॥

अर्थात् जैसे एक पहिया ते रथ नहीं चले तैसे पुरुषार्थ किये विन दैव सिद्ध नहीं करें ॥ १ ॥ जो मनुष्य कोई कार्य नहीं करे तो भगवत सहायता कोन बात पर करेंगे यदि कहो कि कितने जन अनेक उपाय करे हैं तिन को सिद्ध क्यों नहीं होय तो यामें तीन कारण जानने चाहियें एक तो यह जो यथार्थ उद्योग और श्रम जो कार्य में जैसो चाहिये वह नहीं बने वा में वह न्यूनता करे है अथवा कोई पूर्व जन्य दोष प्रवलता सों वह कार्य पूरो नहीं होय सके अथवा यह है जो जैसे वृक्ष को वीज है और वाको वोये है और नित जतन करत आये हैं जब वाको समें आवेगो तब ही फल मिलेगो कोई वृक्ष वर्ष दिन में फल दे है कोई पांच वर्ष में कोई दस वर्ष में तैसे कार्य के उद्योग में लगे रहे तो अवश्य समे आये ते कार्य सिद्ध हो जाय और पूर्व जन्य दोष है वोहु समय पाय के मिट जाय है भगवत ने सब वस्तु के लिये एक काल की अवध हू नीयत करी है सर्वदा समय एक स-

मान बरोबर नहीं रहे है यदि कहो कि प्रालब्ध बलवान है प्रालब्ध में होय तो मिले सो ठीक है प्रालब्ध भी तो पूर्व संचित कर्म कर के भयो है और क्रियमाण कर्म जो अब करे है वही आगले जन्म में अथवा आगे पर प्रारब्ध होत है और जो कार्य के निमित्त उद्योग और परिश्रम कियो और वाको फल या जन्म में मिलवे को समय न आयो वही किये जैसे कर्म को फल अगले जन्म में अनायास अथवा थोड़े ई परिश्रम में प्राप्त हो जाय है और वाही को प्रालब्ध ते मिल्यो कहे है सो जन्मान्तर में जैसो शुभा शुभ कर्म को उद्योग में श्रम करि राख्यो है ताही के अनुसार प्रालब्ध को फल होत है जो पूर्व जन्म में कोई ऐसो सुकर्म नहीं बन्यो जाते राजा अथवा लखपती होय सो अब उद्योग करिके याही जन्म में राजा अथवा लखपति नहीं हो जायेंगे परंतु उद्योग करके अपनो निर्वाह आछी रीत सों करि सके है और मेहनत की मजूरी प्रभु अवश्य देत हि हैं और जैसे एक मनुष्य एक दिन में महल नहीं बनाय सके है परंतु अपने सुख सों रहिवे के लिये एक झोपड़ा तो अवश्य बनाय सके है जा में ओसघाम के कष्ट ते बचे फेर श्रम और उद्योग करते २ कुछ काल में पक्की जगेह रहवे के लिये बनाय सके है और जो वा कार्य में लग्यो ही न रहैगो तो वह कार्य कहां ते सिद्ध होयगो जैसे

श्लोक ॥

जलबिन्दुनिपातेन क्रमशः पूर्यते घटः । स हेतुः सर्वविद्यानां धर्मस्यैव धनस्य च ॥ १ ॥

अर्थात् एक २ बुंद पड़ते २ घड़ा भर जाय है तैसे ही विद्या और धर्म और धन थोड़ो २ हु किये जाय तो बहुत हो जाय है और हु—

॥ श्लोक ॥

शनैःकंथा शनैःपंथा शनैःपर्वत लंघनं ।
शनैर्विद्या शनैर्वित्तमेतत् पंच शनैःशनैः॥१॥
उद्यमेनास्तिदारिद्र्यं जपतोनास्तिपाकं ।
मौनेचकलहो नास्तिनास्ति जागरतोभयं१॥

अर्थात उद्यम करेते दलिद्रता नाश होत है जप करेते पातक दूर होत है मौन अर्थात चुप मारेते कलह मिटे है और जाग्रतते भय नाश होय है । और 'उद्योगिनं पुरुष सिंह मुपैति लक्ष्मी' अर्थात उद्योगी पुरुष के पास लक्ष्मी जाय है। सो उद्योग बिना कछु नहीं मिले । जो मनुष्य को अन्न प्राप्त की इच्छा होय सो खेतिमें उद्यम करे जाको वस्त्र बनावे की इच्छा है सो रूईल्याई सूत काढि कपड़ा बिने हैं जाको बर्तन तैयार करनो है सो पृथ्वी ते धातु काढि वाके पात्र गढावे हैं जाको द्रव्य कमायबे की इच्छा है सो अनेक बनिज व्योपार के उद्योग में श्रम करे है जाको विद्या सीखनी है सो विद्या पढवे में श्रम करे हैं 'सुखार्थिनःकुतो विद्या' सुखार्थी और आलसी को विद्या नहीं आवे याहि प्रकार जिनको भगवत प्राप्ति की इच्छा है सो अलौकिक कार्य में श्रम और उद्योग करें है भगवद् जन को सत्संग और भगवत् सेवा में ही सर्वदा लगे रहे हैं या भांति मनुष्य जो कार्य की

इच्छा राखे वाके उद्योग और परिश्रम में प्रवर्त रहे तो अवश्य वह कार्य सिद्धिही होय ॥

॥ दोहा ॥

अल्प अल्प करि होत है विपुल पुंज के पुंज।
इकइक दाना करि लगे खलिहानन के गंज॥
घिसते घिसते चंदन अकसर ।
टूठा देखा उसी पत्थर ॥
करत २ अभ्यास के जडमति होत सुजान।
रसरी आवत जात तें सिल पर परत निसान॥

और भगवत ने जगत में जो वस्तु बनाई है सब कार्यार्थ है व्यर्थ कोई नहीं तो मनुष्य को हाथ पांव आंख नाक कान सब दियो है और चलतो फिरतो बनायो है और बुद्धि विवेक समझ सुकर्म और दुष्कर्म सब जनायो तो फेर मनुष्य अपने सामर्थ्यानुसार कालक्षेपनार्थ उद्यम इत्यादिक और संसार ते पार उतरवे को भगवत भजन और सेवन को उद्योग नहीं करे और केवल आलसी होय दुख पावे और भगवान को दोष लगावे तो याते अधिक मूर्खता और मूढता और कहा है ॥

॥ दोहा ॥

श्रमहीते सब मिलत है

बिन श्रम मिले न काहि ।
सीधी अंगुरी घी जम्यो
कोउ निकारे नाहि ॥ १ ॥

और मनुष यह बिचारे कि जब भगवत इच्छा होयगी तब करेंगे सो भगवत इच्छा कवन जानीये जा बात करवे की अपने में भगवत ने सामर्थ्य न दीयो होय जैसे लंगडो लुलो अपंग अंध बनायो होय तो जानीये कि मेरे ते चलबे फिरबे देखबे को इच्छा भगवान की नहीं है और जब हाथ पांव नेत्र मे सर्व सामर्थ्य है और उद्योग श्रम लौकिक में अथवा अलौकिक कार्य मे नहीं करे तो यह केवल मनुष्य की आलसी सुभाव को कारण है और मनुष्य कहा नहीं कर सके भगवतताई मिल सके है पर वा बात को उद्योग करे तबही होये यदि कहो कि अजगर कछु भी उद्योग नहीं करे वाको बैठे बैठाये खायबे को मिल जाय है तो वाहु को बिचारीये जो वामे फिर वे डोलबे को सामर्थ नहीं तब वाको भक्ष वहीं भगवान पहुचाय देत हैं पर ताहुपर जितनो सामर्थ वामें है तितना करे है तभी पेट में भक्ष जाय है अर्थात जब मोढो खोल स्वांस खैंचे है तभी पेट भरे है जो मुख पसारे न रहतो और स्वांस न खैंचे कहां ते पावतो ताते जितनो जो उद्योग और परिश्रम करे है पाछे वितनोही वाको सुख प्राप्त होय है और भगवान सहायताहु करे हैं रास पंचाध्याई में भगवान जब अन्तरध्यान भये तब व्रज भक्तन ने भगवान के खोज में परिश्रम कर बन बन फिरी

हैं निदान भगवान उनको मिलेई हैं जो आलस कर बैठ रहते तो भगवत कहां ते मिलते यदि कहो कि खोज बे ते नहीं मिले जब श्रम करके हार निस्साधन होय भगवत लीला को अनुभव करबे लगीं तब भगवान प्रगट होय आय मिले तहांहुं जान्यो चाहीये जो वाही को नाम उद्योग उपाय है निदान कोई पर कोई उपाय में परिश्रम कियो कि न कियो खाली अपने घर जाय बैठ तो न रही नहीं तो भगवत काहे को मिलते भगवान को गुणगान कियो और भगवत लीला करते २ मिले सोही लीला उनके प्राप्त को उद्योग भयो और कुछ न करते और मिल जाते तो कह्यो जातो जो बिना उद्योग और श्रम के मिले ताते जगत में यह दृष्टान्त हु प्रसिद्ध है कि 'हरि सो लाग्यो रहो रे भाई तेरी बनत २ बन जाई' सो मनुष्य पहाड़ पर कूप खोदो चाहे सोहु होय सके है पर वामें तन मन सो लग्यो रहे तो ही कार्य सिद्ध होय जैसे एक मनुष्य कूप खोदबे लग्यो तब वाने विचार्यो जो टाकिन ते खोदोगो तो मेरो जन्म बीत जायगो काम न होय गो। तब सोच विचार वारूद लाय गढा खोद भर २ पहाड तोड दस दिन में कूप बनाय लियो यदि कहो कि इतनी बुद्धिहु तो होनी चहीये सो मनुष्य जा काम के पीछे तन मन ते लगे तो भगवान वा कार्य के उपाय की बुद्धिहु आपते आप सूझावत जाय है ताते जीवको हु एसो उद्योग और परिश्रम करनो उचित है जामें अलभ्यवस्तु की प्राप्ति होय सो श्री महा प्रभुन के वाक्य है जो अपनो मारग स्वा-स्थता को नाही और जीवन पर कृपा करके आपने सब सुगम कर दीयो है और अदेय दान दाता हैं परंतु जीवकोहु

तो कछु सन्मुखता चाहिये जैसे बचनामृत में प्रसंग है दानी दान देत है पर मंगता कोहु तो अपनो पल्ला पसार लेनो चाहिये तासो जीव को श्रम करनो प्रभु के प्राप्ति के उद्योग में लगे रहनो उचित है ॥

॥ दोहा ॥

या जग में बिनु श्रम कभी
मिले वस्तु नहि कोय ।
नहि धन विद्या चातुरी
नहिं प्रभु को पथ कोय ॥ १ ॥

ताते हे महा प्रभु अपने सेवा भजन के उद्योग में यह दासहु को बुद्धि दीजे और सहायता कीजे ॥

॥ प्रसंग ३८ काल व्यर्थ नहीं खोनो याके विषय में ॥

मनुष्य को काल व्यर्थ खोनो सर्वथा उचित नहीं जो धन खोय जाय तो वह फेर पाछे मिल सके है परन्तु जो समय हाथ सो जाय है तो फिर कितनो सोनाहु दीये पाछे हाथ नहीं आवे समे न बारंबार गयो काल फिर नहीं आवे आज याते काल बड़ो अनमोल पदार्थ है सो धन खोय जाय तो लोग रोवे और बिचार कर देखिये कि मानुष तन पावनो और एसो समय हाथ आवनो बड़ो दुर्लभ है सो व्यर्थ खोय देनो अथवा हाहा ठीठी खेल कूद निंद्रा इत्यादिकहो में बितावनो और यह बात को सोच पछताव न राखनो यह

बड़ी भूल है। जैसे यह दृष्टान्त है कि एक आंधरो जेठ बैसाख की दुपहरीया में धूप तें कष्टित होय पटपर में पड्यो २ विचार कियो कि इहां पर जो यह मंदिर है ताके भीतर चलिये तो यह कष्ट दूर होय और छायाहू मिले और सुखते सोईये ऐसो बिचार वह मंदिर के दीवार को हाथ लगाय के चल्यो कि द्वारी आवे तो भीतर जावे इतने में जब द्वार के पास आयो तब आंधरे के माथा में खजुली उठी सो देवार को छोड माथा खजुआवे लग्यो इतने में दरवाजा तो निकस गयो फेर वही दीवार पर हाथ लगाये चल्यो कि दरवाजा आवे तो भीतर चलिये सो जब दरवाजो आवे तब वह आंधरो माथो खजुआवे एतने में दरवाजा निकल जाय और वही दीवाल के आस पास घुम्यो करे इतने में सांझ हो गई मंदिर को दरवाजा बंद होय गयो और आंधरो भूखो प्यासो बाहर पड्यो रह्यो वामें मेह भी बरस्यो तामें अनेक दुख पायो कियो। तैसे मनुष्य एसो समय पायके सावधान होय चेते नहीं और आगे के लिये कछु सुकृतको उपाय न करे तो जन्म जन्म अनेक दुख पायो करे हैं मनुष्य तन जो है सोभगवान के पास जावे को दरवाजा है सो यामें चूक्यो तो चौरासी लाख जोनी में फिरबो करे है कहुं राह नहीं मिले जो संसार ते छूट भगवत की प्राप्ति होय सो यह समे पाय व्यर्थ तुच्छ वातन में गँवाये देनो सो जन्म जन्म दुख भोगनो और पाछे पछतानोही हाथ है॥

॥ स्लोक ॥

पुनर्वित्तं पुनर्मित्रं पुनर्भार्या पुनर्मही ॥
सर्वं रत्नप्रदानेन शरीरं न पुनः पुनः ॥१॥

अर्थात् धन मित्र स्त्री और पृथ्वी सब रत्नप्रदान करके फेर मिलेहै शरीर फेर फेर नहीं ॥ १ ॥ सो देखनो चाहिये जा समे मनुष्य व्यर्थ काल खोयवे में प्रवर्त होय है तो चौपड़ गंजीफा सतरंज ईत्यादि खेल में लगजाय है जो बाजी जीत्यो तो एसो उन को होय है कि मानो बड़ो पदार्थ मिल्यो अत्यंत प्रसन्न होय फूल्यो नहीं समाये परन्तु सच पूछो तो प्रत्यक्ष यही देखने में आवे है जो धरती में हाथ रगड़ने पड़े और आंखे नीची करनी पडी और जब उठे तब हाथ झाड़ू के उठे वास्तविक तो काठके खेल बना अथवा कागद के टुकडाहीको बादशाह मान लियो और जो खिलाड़ी की जीत भई सो समुझो कि मैंने बादशाहत पाई सो जागते भए स्वप्न में पड़नो है ॥

॥ दोहा ॥

धरिसिरहाने ठीकरा सोयरह्यो कंगाल ॥
स्वपने में राजा भयो जागे वोहिहवाल ॥१॥

और जो खिलाडी के गरे हार को हार पर्यो अर्थात् बाजी हार्यो तो काटे तो लोहू न आवे और झूठ आनन्द के उद्योग में अपने अनमोल दमको वेदम करि रोनी सूरत बनाये टप टप आंसू बहाये भले करम फूट्यो व्यर्थ घडी गवांई एसेहीं धनवान कितने धन मद में अंध होय दस बीस खुशामदी कों पास बैठाये हाहा ठीठी झूठी गप शप करि अथवा सैल सपाटे नाचरंगही में काल व्यतीत कर जन्मारोकाढ देहै यदि एतनो समय सुविद्या और सद्ग्रंथन के अवलोकन और उत्तम कार्य में व्यतीत करे तो कितनो लाभ और आनन्द जीव को मिले और लौकिक अलौकिक दोऊ सुधरे सो बुद्धिमान लोग अने-

क शास्त्र को बिचार अथवा सतसंग इत्यादिक उत्तम पदार्थ के लाभ में ही प्रसन्न होय अपनी कालक्षेपणा करे हैं जैसे यह

श्लोक ॥

काव्यशास्त्रविनोदेन कालोगच्छतिधीमतां ॥
व्यसनेनच मूर्खाणां निद्रयाकलहेनवा ॥ १ ॥

अर्थात् काव्य शास्त्र इत्यादिक के बिनोद में बुद्धिमान को काल बीते है और दुर्व्यसन निद्रा क्लेस याही में मूर्खन को दिन जाय है॥१॥परन्तु या बात को भी मनुष्य को अवश्य सोचि बिचार करनो चाहिये जो यह शरीर है सो क्षणभंगुर है याको क्षण भरोसो नहीं काल सर्वदा माथे पर सवार है तो या शरीर के सुख के लिये सौवर्ष की नेह दे अनेक प्रकार कि ठाठ की रचना करे है और भांति भांति की वस्तु ल्याय २ संचय करत जात हैं और झूठ सच छल कपट धूर्ताई इत्यादि करके लोगनते माल मारवे की नियत में लगे रहे हैं तो यह कोन काम आवेगी और अपने को कहा प्राप्त होयगो और कहा दशा होयगी और काल तन से दम निकाल ले भागोगे तो हम अपने साथ यह दोय हाथ ते कहा २ वस्तु लेत जायँगे और जहां सर्वदा के लिये रहनो है तहां के लीये कहा सामान कीनो और दीनो है याते कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

अनित्यानिशरीराणि विभवोनैवशाश्वतः ॥
नित्यंसंनि[illegible]तोमृत्युः कर्तव्योधर्मसंग्रहः ॥ १ ॥

अर्थात् शरीर अनित्य है सर्वदा नहीं रहै और विभौहु बरोबर कभी नहीं रहै और मृत्यु सदा निकट खडी है याते धर्म को संग्रही कर्तव्य है ॥ १ ॥

हरि हरि छांडि दुसरी न कीजे बात
एक एक घडी सो तो करोडन को जात है।
घडीपल दिन खोऐ फेरहु न आवे तोहे
क्षण भंगदेह ताको मरन जैसी घात है॥
ताते तूं प्रभु संभार बकवो बिसार डार
तज अमृत विष काहे कू खात है।
कहे विष्णुदास उसास को पतियारो नहीं
घडी पल छिन में निकस निकस जात है ॥

सो मनुष्य को यह समय बड़ो दुर्लभ है जितनो सुकृत या समे करते बनै सो कर ले नहीं तो बूंद को चूक्यो फेर घड़ा ढरकायेहु वह समय हाथ नहीं आवे धन्य है वही पुरुष जो उत्तम कार्य और भगवत चर्चा भजन में अपनो काल बितावे है। जैसे सूरदास जी ने कह्यो है। 'यह जियजान एही छीनु भजले बीते जात असार। सूरदास यह समो पायवो दुर्लभ फिर संसार'। सो हे प्रभु यह किंकर अपनो काल आपके स्मर्ण में बितावे ॥

॥ प्रसंग ३८ समय पर सावधानता के विषय में ॥

समय पर सावधानता यह जो भगवत ने जगत में सर्व कार्य के लिये समय भी नियत कर्यो है जा कार्य के लिये जो समय आवे वह समय पर मनुष्य वह काम को करले तो वह कार्य हो जाय नहीं तो वह समय निकल जाय तो फेर नहीं बन सके जैसे खेत में नाज है अथवा वृक्षन में फल फूल है तो जब याको परिपाक होय वा समे तोड़ले तो काम को रहे और स्वादहु लगे और वा समें न तोड़े तो सुख जाय फल खावे जोग न रहे फूल में ते सुगंध निकल जाय सूंघवे लायक न रहे एसेही धरती में बीज बोयो जाय है जो ऋतु में जो बीज बोवे को समय है वाहि ऋतु में बोये तो उपजै और जब समय निकल जाय तो बोयो काम न आवे या प्रकार मनुष्य के आंख कान हाथ पांव देख तो सुनतो चलतो फिरतो है और सब इन्द्रि बलवान हैं वास में जो कार्य बिचारे तो कर सके हैं और वह अवस्था निकल जाय है और बुढापा आय घेरे है तब कछु नहीं बन सके न आंख से देख सके न कान से सुन सके न चल सके न फिर सके रोग सो ग्रसित होय केवल खाटही को सेवन करे है ऐसेही जब ताईं शत्रू के हाथ नहीं पड़े तभी अपने बचबे को उपाय करले अथवा शत्रू के हाथ पड़े और वह प्राण मारबे को लग्यो है तो वा समय में असावधानी अर्थात गफलत छोड़ जो प्राण रक्षा को उचित उपाय होय वही करनो चाहिये ॥

॥ श्लोक ॥

तावद्भयस्यभेतव्यंयावद्भयमनागतं ।
आगतंतुभयंवीक्ष्यनरःकुर्याद्यथोचितं ॥१॥

अर्थात तब ताईं भयसों डरनो जब ताईं भय पास नहीं आई, आई भय को देख मनुष्य को वा समय उचित उपाय करनो चाहिये ॥ १ ॥ जैसे यह दृष्टान्त है। एक चीतेरा कोई देवालय में मचान पर चढ चित्रकारी कर रह्यो हतो जब चित्रकारी कर चुक्यो तब वाको देखवे में ऐसो लौलीन होय चित्रकारी निहार तो पीछले पांवते हटतो चल्यौ निदान मचान के कोर तक पहुंच्यो जो एक पैर और पाछे हटे तो मचान ते नीचे तीन पौरसा के गिर कर मर जाय सो वाको चेरा नीचे खड़ो खड़ो देखतो रह्यो झट एक कपड़ा रंग में भीजोय वा चित्रकारी के उपर फेंक मार्यो सो वह चितेरो देखतेही आगे की ओर दौड़्यौ वह कपड़ा को चित्रकारी मेते निकार नीचे उतर के वा चेरा को मारबे लग्यौ तब चेरा ने सब वृतान्त कह्यो कि तुम चित्रकारी देखवे में ऐसे लौलीन और अचेत होय मचान के कोर पर पिछले पांवनते हटते चले आए जो मैं मुखते कछु बोल हां हां करके खबरदार करतो तो तुम अवश्य घबराय के नीचे गिर पडते प्राण निकस जाते यदि तुम जिवत हो तो चित्रकारी बहुत बन जायगी याते जहां तुमारो ध्यान बंध्यौ हतो ताही ओर दौडबे को उपाय कियो यह सुन के वह चितेरा अपने चेरा पर बहुत प्रसन्न भयो और वाको उपकार मान धन्यवाद दीयो

जो तेने बड़ी बुद्धिवानी करके मोको बचायो नहि तो आज मैं अवश्य मर जातो याते कह्यो है ॥

॥ स्लोक ॥

पुस्तकेषुचयाविद्यापरहस्तेषुयद्धनं ॥
उत्पन्नेषुचकार्येषुनसाविद्यानतत्धनं ॥१॥

अर्थात जिनकी विद्या पुस्तकही में है और जिनको धन पराये के हाथ में और समय पर काम आय पड्यौ तो न वह विद्या काम आवे न वह धन काम आवे अर्थात् यह जो समय पर अपने पास होय सोही काम आवे है। सो साव-धानता याको नाम है जो समय चूके नहीं असावधानता छोड़ अपनो काम जो अवश्यक है सो कर जाय और अपने पासवर्ती कोहु सावधान कर दे ताते जगत में आय अपनो मन भगवत की ओर जाने लगाये दीयो है वही या समय पर सावधान है। ताते हे प्रभु यह दासहु ने एसो समय पायो जो आप के शरण आयो सो याकी असावधानता मिटाय अपनी ओर लगाय लीजिये। हुं अपराध भयो तम अपने अपनी ओर निहार महा प्रभु अब की बैर उबारिये ॥

प्रसंग ४० पंडित की मूर्खाई औ चाकर आगम सोची के विषय में ॥

मनुष्य को शास्त्र पढके और धन कमाय के सार्थक यही है कि आगम के लिये परलोक बनावे सो जाने अपनो अलौकिक न सुधार्यो तो पंडित मूर्ख समान धनवान दरिद्र

समान है क्यौं जो लौकिक तो चार दिन को है और अलौकिक सर्वदा के लिये है ताते वहां को सामान करनो अवश्य चाहिये जैसै यह प्रसंग में दृष्टान्त है जो एक पंडित अपने चाकर को एक छडी सौपी और कह्यो जो तोको सबते अधिक मूरख मिले ताको तू यह छड़ी दीजो सो कुछ दिन बीते वा पंडित के मरवे को समय आयो तब चाकरते कह्यो अब मै परलोक को जात हौं तब चाकर ने पुछ्यौ जो तहां ते कब आओगे तब पंडित ने कह्यो अरे मूरख मरे पीछे वहां ते कोई आवे है जो मै आउंगो तब चाकर ने कह्यो कि तुम चार दिन के लिये कहुं जात रहे तो वहां के लिये सब बात को बंदोबस्त करके जात हते अब तो सर्वदा के लिये जात हौ तहां के लिये कहा बंदोबस्त कर्यौ है तब पंडित ने कह्यो वहां के लिये तो मोसु कछु भी वंदोवस्त नहीं बन्यो तब वह चाकर ने भट वह छड़ी लाय पंडित के हाथ में दे दीयो और कह्यो जो फेर तुम ते अधिक मूरख कौन है ॥

॥ स्लोक ॥

कोधर्मो भूतदया किं सौख्यमरोगिता जगतिजन्तोः ॥ कः स्नेहः सद्भावः किं पांडित्यंपरिच्छेदः ॥ १ ॥

अर्थात जगत में प्राणी को कौन धर्म है कि जीवपर दया, सुख कहा है कि निरोगता, स्नेह कहा है कि निष्कपटता, पंडिताई कहा है बिचार जो अपने आगम को सोचनो और भगवत की भक्ति करनो ॥

॥ श्लोक ॥

श्वानपुच्छमिवव्यर्थं पांडित्यं भक्ति वर्जितम् । नगुह्यगोपनेशक्यः नचदंशनिवारणे ॥ १ ॥

अर्थात भगवत भक्ति बिनु पंडिताई कुत्ता के पोंछ के समान वृथा है जैसे कुत्ता को पोंछ न तो गुह्य स्थान के ढाकबे के काम की न मक्खिका के उड़ावे के काम की ॥ १ ॥ एसे ही एक धनवान बैपारी अपने घरते नदी के पार नगर में नित्य सौदा बेचवे जायो करे और आप एक जगे ठहर के अपने चाकर को बजार में माल बेचवे को भेजे और वासो नित कहे कि तू सौदा बेच रुपया ले झट आईयो जामें सांझ न पड़े क्यों जो नदी पार अपने घर को जानो है रात पड़ जा-यगी तो फेर कैसे पार उतरेंगे यहां पड़े २ दुःख पावेंगे घर में जाय खाय पीवे बे फिकिर अपने कुटुम्ब में सोवेंगे सो वह चाकर बजार में जाय माल बेच एक स्थान में कथा होत रहे सो नित्य सुनके तब आयो करे एक दिन कथा सुनबेमें देरी लगी सो अबेर को आयो तब वह धनवान क्रोध कर भौं को तांन अपने चाकरते कह्यो अरे तोको नित्य हम समझाय दे हैं कि जलदी आईयो नदी पार अपने घर को चलनो है रात पड़ जायगी तो यहां दुख पावेंगे सो तोको इतनो ज्ञान नहीं जो इतनी बेर लगाई तब वह चाकर बोल्यो साहुजी साहेब आप को एक नदीपार जानो और एक रात यहां दुखते रहवे को इतनो सोच है और मोको तो संसार समुद्र के पार जानो और जन्मांतर को दुःख भोगबे ते छुटनो याको सोच पड्यो

है सो मैं आप की चाकरी नहीं करूंगो जामें मेरो परलोकहु सधै वैसी चाकरी ढूंढूंगो यह चाकरी लोजिये और मोको रजा दीजिये सो यह चाकरकी बात सुनके बेपारी को ज्ञान भयो सो जो द्रव्य कमायके गाड़े हतो सो घर आय अलौकिक कार्य में लगाय अपनो आगम बनायो ताते हे जीव तोको भी संसार रूपी समुद्र के पार जानो और अपने प्रभु को मुख देखानो है जो कुछ भगवत ने विद्या और धन दियो होय सो भगवत कार्य में लगाय सार्थक कीजो अन्यथा व्यर्थ मत कीज्यौ ॥

॥ प्रसंग ४१ जीवन अर्थात आयुश को विचार के विषय में ॥

प्रत्येक मनुष्य को या बात में ध्यान कर विचारनो चहीये जैसे मनुष्य की अवरदाय एक सौ वर्ष की मानीये तो तामें ते आधी सोवे में गई रही आधी तामें कछु लड़कपन में गई रही आधी तामें कछु वृद्धावस्था में व्यतीत भई थोडीसी पूंजी हाथ लगी तामें ते जो दुसंगतें बचे और सत्संग मिलो और चेत गयो तो आगे के लिये अलौकिक सुधारो नहीं तो माता के पेट ते जन्म ले मनुष्य तन पाय वृथाही गंवायो और ज्यौं ज्यौं बाल अवस्था ते बढ़तो जाय है त्यौं २ संसार ते प्रीत गाढी होती चली जाय है इहां ताई मन में समाय जाय है कि मैं सदा सर्वदा एसोई बन्यो रहुंगो और अपने लौकिक सुख के लिये अनेक वस्तु को संग्रह करके लाख वर्ष की नीम दे है और जन्म गांठ को ध्यान कर बिचारीये तो पूंजी में एक वर्ष औरहु घट गयो जैसे पानी में लोन को

ढेला गलतो चल्यो जाय है तैसे मनुष्य को जीवन चण चण में घटतो चल्यो जाय है पाछे बढे नहीं ॥

॥ स्लोक ॥

व्रजंतिननिवर्तंतेस्त्रोतांसिसरितांयथा ।
आयुरादायमर्त्यानांतथारात्र्यहनीसदा॥

अर्थात जैसे नदी में पानी को सोता जाय है फेर पीछे नहीं फिरे तेसे मनुष्य को आयुश रात दिन लेके चले जाये हैं और नहीं फिरे ॥ १ ॥ सो मनुष्य को यह बात सोच कर जो अपनो कार्य अवश्य कर्तव्य है सो करिलेनो याते चूकनो और असावधान रहनो बड़ी भूल है जैसे यह प्रसंग में दृष्टान्त है। एक साहुकार के वहां रात मोमबत्ती जल रही हती और मुनीम गुमास्ता रोकड़ीया सब अपनो २ हिसाब लेखा जोखा वही खाता लिखत पढत हते और बात चीत हाहा ठीठीहु करत जात हते इतने में एकने देख्यो जो मोमबत्ती तो होय चुकबे आई है थोडी सी रहि गई है और विध तो मिली नहीं और दुसरी बत्ती भी या ठिकाने नहीं है और कल सबेरेही मालिक को सब मोहासबा देनो है नहीं तो चोर बनेंगे सो यह सोच के सबने हाहा ठीठी गप शप छोड़ झट सावधान होय अपनो काम पूरो करब में जो अवश्यक रह्यो मन लगाय प्रवर्त भये सो वह बत्ती को प्रकाश रहतेही सब लिखनो पढ़नो हिसाब पूरो कर लियो यही प्रकार जीव को अपनी आयुश पर ध्यान कर विचारनो चहीये कि मोम की बत्ती के समान नित्य २ घटती चली जाय है न जानिये कौन समे बुझ जाय ताते याके रहते ही और सब काम छोड़

भगवत स्मर्ण भजन कर लिनो जामें हे जीव तोको अपने प्रभुन के आगे सन्मुखता रहे ॥

॥ श्लोक ॥

शतं विहाय भोक्तव्यं सहस्त्रं स्नान माचरेत्। लक्षंविहाय दातव्यं कोटिं त्यक्त्वा हरिंभजेत् ॥ १ ॥

अर्थात सौ काम छोड़ि भोजन करनो हजार काम छोड़ न्हानो लाख काम छोड़ि दान करनो करोड काम छोड़ि भगवत भजन करनो ॥ १ ॥

॥ श्लोक ॥

कृष्णात्वदीयपदपंकपंजरांते अद्यैवमे वसतुमानसराजहंसः । प्राणप्रयाण समयेकफवातपितैः कंठावरोधनविधौ स्मरणं कुस्तस्ते ॥ १ ॥

अर्थात् हे कृष्ण तुम्हारे चरण कमल रूपी पिंजरा में अभी ही मेरो मन रूपी हंस जायके बसे । क्यों जो प्राण जाते समय कफ वायु और पित्त करके कंठ को अवरोध होयगो तब वा समे स्मरण कहां ते बनेगो ॥ १ ॥

॥ प्रसंग ४२ असत्य और कटुभाषण के विषय में ॥

बोलनो या भांति को चाहिये जो जाके पास जाय और

जासों बात करे सो प्रसन्न होय और अपनो कार्यहू निकले और बिना औसर और बिचारे बोले तो बोलनो व्यर्थ जाय तासों एक बोलबो न आयो सब आयो गयो धूर में ॥

॥ दोहा ॥

बिन औसर नहिं बोलिये बोले समे बिचार।
फीकीहू नीकी लगे ज्यों विवाह में गार ॥
नाकाहू फिकी लगे बिन औसर की बात।
जैसे बरनत युद्ध में रस श्रिंगार न सोहात ॥

ताहू में मृदुभाषण और मर्य्याद को बोलनो सब को प्यारो है और कटु और व्यंग को बोलनो सर्वथा सब को असह्यई लगे है ॥

॥ दोहा ॥

कागा काको लेत है कोइल काको देत ।
मीठो बचन सुनाय के जग अपनो कर लेत ॥

और बेमरजाद और अहंकार के बचन बोलवे वारे की ओर श्रेष्टजन कभी कान नहीं दे वाकी बात सों अपनो मुख फेर लेत है जैसे एक यह भी प्रसंग है। जो एक माधुरीदास कछु पुस्तक बांच रहे हते सो गुलाबदास ने आय के उनसों पूछ्यौ कि यह पोथा खोल के कहा देखत हौ यामें कहा लिख्यौ है तब माधुरी दासने कह्यो कि यामें लिख्यौ है जापर भगवत कृपा होय ताके मुखते फूल झरत है और

जापर अनुग्रह नहीं ताके मुखते सांप बिच्छु गोजर आदिक निकलत हैं तब गुलावदास ने कह्यो ऐसो मनुष्य कौन है जाके मुखते सांप विच्छु आदिक निकले तब माधुरी दास ने कह्यो एसी मनुष्य जगत में वहुत हैं हमारे तुम्हारे मुखते दिन रात में सौ पचास सर्प बिच्छु गोजर निकल्योई करें हैं यह सुनि गुलाब दास रोष करि बोले तुम्हारे मुखतें निकलत होंय तो होंय पर हमारे मुखतें तो निगोडे कभी नहीं निकलेंगे तब माधुरीदास ने कह्यो भलो अब तुम्हारे मुखतें निकलेंगे सो मैं कागद ऊपर लिखत जाउंगो गुलाब दास ने झट कागद कलम माधुरी दास के आगे धर दियो तब माधुरी दास हंस के बोले कि कागद थोड़ो है तब गुलाब दास ने कह्यो कितने सारे सांप बिच्छु हमारे मुखते निकलेंगे जो यह कागद के टुकड़ा में नहीं लिखे जायंगे माधुरी दास ने झट लिख लियो यह मूर्ख ताके बचन बिच्छु है इतने में घटा आई पानी बरसबे को डौल भयो तब गुलाब दास बोले यह बादर दुष्ट घर जावे देगो के नहीं माधुरी दास ने झट लिख लियो यह अन्याव के बचन सांप है फेर पानी बरस गयो और राजा की सवारी आई सो देख गुलाब दास बोलि यह ससुरो तो सवारी में बैठ्यो गयो और रस्ता गदला कर गयो हम को अब कीचड में जानो पडेगो माधुरी दास ने झट लिख लियो यह अभिमान के बचन सांप है फेर गुलाब दास मुह बनाय हें हें कर बोल्यो आज एसे सारे सूम को मुख देख्यो जो जो माल चढबे को न मिलो और बूढौहु रांड को ठिकानो नहीं माधुरीदास ने लिख्यो यह लोभी को बचन गोजर है इतने में सांझ पड़ी तब गुलाब दास ने

कह्यो अब तो घर जात हैं तेली धीचोद न मिल्यो तो रात अंधेरेही में पड़ रहनो पड़ेगो तब माधुरीदास दूसरो कागद ढूंढवे लगी तब गुलाब दासने पूछ्यौ कहा ढूंढो हौ तब माधुरी दास ने कह्यो वह कागद तो पूरो हो गयो तासो और ढूंढहों तब गुलाब दास घबराये अभी तो घड़ीह्न भर नहीं बीती ऐसे कितने सांप बिच्छु गिरे तब माधुरी दास ने सब पढ़के सुनायो सो सुनके लज्जित भये सो बोलवे तेही मनुष्य पहिचान्यो जाय है जो यह मनुष्य या भांत को है सब शरीर भर में एक मनुष्य की वाणी करके सर्वस्व मिले है और वही वाणी ने सरवस्व हरण हो जाय है 'बाते हाथी पाईयां और बाते हाथी पाउं' एक बात ऐसी बोलिते हाथी मिलि है और एक बात ऐसो बोलि हाथो के पांवते घसीड्यौ जाय है ताते सर्वदा विचार के बोल निकासनो और प्रिय बोलनो यही मनुष्य में सभ्यता है और जो लोग बड़ेन के मुख लग जाय हैं और अन्यथा बोलबो करे हैं उनको मुखरता दोष प्राप्त होत है और बहुत बोलिते बकवादो कह्यो जाय और जा समय बोलबो अवश्य वा समें नहीं बोलि तो चूपा कहावे और नहीं बोलबे के समे बोले तो वही मूर्ख में गौन्यो जाय याते समय विचार बोलनो यही उचित है ॥

॥ श्लोक ॥

न जारजातस्य ललाटशृंगं न साधु जातस्य करेस्ति पद्मं। यदायदामुंचति वाक्यजालं तदा तदा लक्ष्यति जार- जातः ॥ १ ॥

॥ श्लोक ॥

काकः श्यामः पिकश्यामः कोभेदः पिककाकयोः । प्राप्ते बसंतसमये काकः काकः पिकःपिक ॥ १ ॥

अर्थात कागा और कोईल दोहु स्याम रंग कारे हैं यामें भेद नहीं परन्तु बसंत ऋतु में जब काग और कोईल दोनों बोलि हैं तब आप प्रगट हो जाय है यह काग है यह कोईल है तैसे मनुष्यहु बोलते पहिचान पडे हैं ॥

॥ श्लोक ॥

प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वे तुष्यंति जंतवः ।
तस्मात्तदेव वक्तव्यं वचनेकिं दरिद्रता ॥१॥

अर्थात प्रिय बचन के प्रदान सो सब जीव की संतुष्टता होय है याते प्रियही बोलनो यामें कहा दलिद्रता है ॥ १ ॥

॥ श्लोक ॥

अब्धौ विधौ वधुमुखे फणिनां निवासे स्वर्गेसुधावसतिवैविबुधावदन्ति। क्षा-रं क्षयं पतिमृतिं विषनाशमेति कंठे सुधावसति वै भगवज्जनानां ॥ १ ॥

अर्थात पंडित कहे हैं कि अमृत जो है सो समुद्र में चंद्रमा में, स्त्री के मुख में, सर्प में, स्वर्ग में, बास करे है परन्तु

नहीं, समुद्र में होतो तो जल खारी क्यौं । चंद्र में होतो तो चीणता क्यौं । सर्प में होतो तो काटे मरे क्यौं । स्त्री के मुख में होतो तो पति क्यौं मरे । स्वर्ग में होतो तो देवता भूलोक में क्यौं गिरते याते अमृत जो है सो निश्चय करके भगवज्जन के कांठही में बसे है ॥ १ ॥ याते भगवत जन को सत्संसंग करे जाते तेरी वाणी अमृत होय ॥

॥ प्रसंग ४३ सभा सोहातो बोलनो और बचन पर लक्ष के बिषय में ॥

जब ऐसी सभा में मनुष्य जाय पड़े जहां सांच बोलेते सब लोगन को अप्रिय लगे और बिरोध उत्पन्न होय और झूंठ कहेते अपने स्वधर्म की हानि होय तो ऐसे धर्म संकष्ट में उचित है जो मनुष्य बिचार के ऐसो बोलि जामें लोकापवादहु न होय अपनो स्वधर्मह्व रहे सोही बुद्धिवानी और चतुराई को काम है जैसे कोई एक वैश्नव दच्चिण को गये तहां एक देश में नाग देवता को बड़ो मान हतो राजा प्रजा सब नागही की पूजा करते और नागही को सर्वो पर जानते और जो नाग की अवज्ञा करे ताको नाग काटे ऐसो उनको निश्चय विश्वास हतो सो वहां राजा की सभा में वह वैश्नवहु को जानो बन्यो सो वह राजाने वैश्नव ते पूछ्यो कि नाग देवता बड़े कि भगवान बड़े तब वह वैश्नव बने कह्यो जो नाग देवता को छोटे कहिके कहा उनसो कहा बनो है बड़े हैं सो तो बड़ेई हैं सो या उत्तर ते राजा हु प्रसन्न भयो और अपनो इष्ट धर्महु बड़ो रह्यो अर्थात भगवान बड़े हैं सो तो बड़ई हैं यह बात सिद्ध भई और नागदेवता को भगवान ते बडोहु न कह्यो और सभा में कोई ते विरोधहु न पड्यो

सब अपने मन में यह समझे कि वैष्णवजी ने कह्यो ताको अभिप्राय यह जो नाग देवता वड़े हैं इनको छोटो कहनो नहीं, नहीं तो काटेंगे और वैष्णव ने नाग को छोटे कहिके काटबे को कह्यो सो अर्थात यह जो दुष्ट को बुरो कहिये तो तो वह दूनो बुरो माने यह आशय ते चतुराई को उत्तर दियो या प्रकार जो अन्यमारगीन के सभा में जाय पड़े तो एसो बिचार के सभानुसार बोले जामें विरोधहु न होय और अपने स्वधर्म में न्यूनताहु न आवे। और श्री महाप्रभुन ने श्री सुबोधिनी जी में कह्यो है ॥

॥ स्लोक ॥

सत्यं ब्रूयात् प्रियंब्रूयात् नब्रूयात् स-त्यमप्रियम्। प्रियं च नानृतं ब्रूयादे षधर्मः सनातनः ॥ १ ॥

प्रथम स्कंध की श्री सुबोधनी जी में वाक्य है कि सत्य बोलनो और प्रिय बोलनो और ऐसो सांच नहीं बोलनो जो अप्रिय होय और एसो प्रियहु नहीं बोलनो जो असत्य होय यह धर्म सनातन है। ताते बोलबे को विचार एसोही राखनो अवश्य जैसे एक राजा के प्रधान ने दुसरे राजा ते कह्यो कि आप पूर्ण चंद्र हो मेरो राजा तो द्वितीया को चंद्र है यामें ऊपर ते उनकी दिन २ कला बढ़ती कही ॥

॥ प्रसंग ४४ स्त्री बश पुरुषन की दुर्दसा के विषय में ॥

जो जन स्त्री के बश में रहत है और स्त्री के कहे प्रमाण

वही मत में चलत है और अपने हानि लाभ को विचार नहीं करे वे पुरुष अपनी पत और लज्जा अपने हाथ खोवत है और धन और धर्म कीहु हानि करत है मनुष्य को चहिये कि आप स्वतंत्र रहि स्त्री को स्वतंत्र न करे और सर्वदा शिक्षा और रक्षा करत रहे जैसे नीति में कह्यो है । 'अंके स्थितापि युवती परिरक्षणीया' जो गोद में हु स्त्री होय तोहु रक्षा करनी क्यों जो स्त्रीन के चरित्र बड़े अगाध हैं ॥

॥ श्लोक ॥

राज्ञस्यचित्तं कृपणस्यवित्तं मनोरथं दुर्जनमानुषस्य। स्त्रियश्चरित्रं पुरुष स्यभाग्यंदेवोनजानातिकुतोमनुष्यः॥१॥

अर्थात राजा को मन और सूम को धन और शत्रू की घात और स्त्रीन के चरित्र और पुरुष को भाग यह देव भी नहीं जाने तो मनुष्य की कहा चलो । जैसे नीचे प्रसंग लिखे हैं एक राजकन्या अपने पिता ते शरीयत बदी रही कि जब मैं आप के हाथो हाथ भूल में कोई वस्तु देऊं तो मैं लाख रुपया लेऊं पाछे कछु दिन बीते वह देश में कोई पंडित आये सो उनको अपने विद्या को बड़ो अभिमान रह्यो कि मेरे आगे कहा चतुराई कर सकेगो सो यह समाचार राज-कन्या ने सुने तब अपनी लौंडी को भेज पंडित जी को रात के समय अपने महल में बोलायो सो पंडित अपने मन में फूले न समाये खूब बन ठन के लौंडी के संग राजकन्या के पास महल में आये तब राजकन्या ने कह्यो आप के विद्या

और चतुराई की हमने बहुत बड़ाई सुनी है सो हम को बताइये और आप कछु त्रिया चरित्र भी पढ़े हो तो सिखलाइये तब पंडित जी बोले हमारे विद्या के आगे त्रिया चरित्र कौन विसारत है तब राजकन्या ने कह्यो बहुत आछो और अपने लौंडी सों कह्यो जाय राजा सों खबर करो कि आप भले राज करत हो कि अपने महल की तो खबर नहीं जो विरानो मनुष महल में घुस के बैठ्यो है आप राज को बंदोबस्त कहा करत हो। सो लौंड़ी जाय राजाते कह्यो सो राजा बड़ो क्रोध कर नंगी तरवार काढ़ दरबार ते चले सो लौंडी आय राजकन्या ते खबर करी तब राजकन्या ने पंडितजी ते कह्यो अब पंडितजी अपनी विद्या और चतुराई निकासिये नहीं तो क्षण भर में आप को माथो काट्यो जाय है सो पंडितजी को काटे तो लोहु न आवे थरथर कांपवे लगे दांत चौयार हाथ जोर घिघिआवे लगे तब राजकन्या बोली खबरदार फेर कभी मत अहंकार कीजियो कि मेरे आगे त्रिया चरित्र कौन विसारत है आछो जाए या संदूक में बैठ्यो सो संदूक में बैठाय ताला लगाय ताली अपने पास राखी इतने में राजा लाल २ आंख कर तरवार निकालि महल में आय पहुंच्यो और पूछ्यो वह विरानो मनुष्य जो घुस के आयो है वह कहां है तब राजकन्या ने कह्यो हजूर ऐसेही राज की खबर राखे हैं न जानिये कौनसो अजान्यो मर्द यहां घुस आयो जब मैंने आप को समाचार भेजे इतने में भागवे लग्यो तब मैंने या संदूक में बंद कराय राख्यो है तब राजा संदूक में ताला बंद देख कह्यो यह ताला की ताली कहां है झट लाव तब राज कन्या ताली राजा के

हाथ में दे हंस की बोली हजूर मेरे लाख रुपया सूल भये जो आपने शरत करी हती कि जब मोको तू हाथो हाथ कोई चीज देगी तब लाख रुपया पावेगी आज आपने मेरे हाथो हाथ ताली लिनो और मेरी शरत पूरी कीनी तब राजा लज्जित होय हंस के कह्यो भलो तूने एक सरीयत के लिये ढोंग रच्यो ताली फेंक पाछे दरबार में चले गये तब राजकन्या ने पंडित को संदूक मेते निकार के कह्यो अब आप के प्राण बचे अपने घर की राह लीजिये परन्तु फेर मत कभी कहियो कि त्रिया चरित्र कहा कर सके है सो सबेरो होयबे आयो हतो पंडितजीकी दाढी मूंछ मुडवाय जनानो भेष बनाय लौंडिन के संग घर पहुंचवाय दियो याते कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

आहारोद्विगुणः स्त्रीणां बुद्धिस्तासां चतुर्गुणा । षट्गुणोव्यवसायश्च कामश्चाःष्टगुणास्मृतः ॥ १ ॥

अर्थात् स्त्रीन में आहार दूनो होत है बुद्धि चौगुनी उपाय छ गुनो और काम अठगुणो पुरुषन ते रहत है । और जो कुलटा स्त्री है सो सर्वदा व्यभिचारही में रहत है और नित्य नवीन पुरुष की चाहना उनके मन में लगी रहत है किन्तु एक पुरुष ते उनकी तृपति नहीं होय सो उनके धर्म कर्म को कछु भी ठिकानो नहीं जैसे एक यह प्रसंग है जो एक नागर के घर श्राद्ध आयो सो अपनी स्त्री सो कह्यो कि मैं

बजार सीधा लेबे जात हों तू घर में सब त्यारी कर राखियो सो वह पुरुष तो बाहर गयो इतने में समो पाय वाको यार आयो सो एक कोठरी में बैठाय वाकी सिष्टाचारी करी इतने में दूसरो यार आयो वाहू को एक दूसरी कोठरी में बैठायो इतने में फेर एक तिसरो आयो वाहू को एक तीसरी कोठरी में बैठायो इतने में फिर वाको पुरुष सीधा लाय स्त्री ते कह्यो अब तू रसोई की त्यारी कर तब वाकी स्त्री ने कह्यो तू द्वार पर जाय के बैठ कोई ब्राह्मण आवे तो वाको भोजन को कहियो तब ताईं मैं सब बिन चून के त्यार करत हों सो वह पुरुष द्वार पर आयके बैठ्यौ तब वह स्त्री ने अपने यार ते कह्यो तुम माथे ऊपर दुपट्टा डार झट निकस के चले जाऊ सो वह दुपट्टा डार निकस गयो फेर वाके पीछे दूसरे को तीसरे को याही प्रकार एक के पीछे एक को बिदा कर दीयो तब वह पुरुष आय स्त्री सों पुछ्यौ यह तीन जने कौन घर में ते बाहर गये तब स्त्री झुनझुलाय के बोली तुम बड़े चीपोड चौदस हौ आज तुमारे बाप को श्राद्ध सो इतनी देर करी तुमको कालते सीधो सामान ल्यावनो नहीं सूझौ कि ए तुमारे पुरखा आय के फिर गये मैं उनको सनमान करके अब तांई नीठ नीठ बैठाय राखे निदान घबराय को चले गये पहिले तुमारे पिता गये फेर पितामह गये तिनके पीछे परपितामह गये तब वह पुरुष रोवे लग्यौ हाय हाय मेरे घर साक्षात पित्र लोग आय के फिर गये अब तू कहे तो मैं दौड़ के बोलाय लाऊं तब स्त्री ने कह्यो अब वे तुम को कहां मिलेंगे तुमारी श्रद्धा ऐसी है तो फेर कबहु आय जायेंगे सो स्त्री के कहे को विश्वास कर लियो याते कह्यो है ॥

जैसे रण में सोना ते लोहा अधिक काम आवे है तैसे मनुष्य को बुद्धि सब कार्य में सब पदार्थ ते विशेष काम आवे है सो बुद्धिमान पुरुषन के संग करेते बुद्धि प्राप्त होत है पशु भी है सोइ मनुष्य के पास रहेते सब बात समझवे लगे हैं वाहु में बुद्धि आजाय है और मनुष्य जोई सारो करे सो काम करबे लगे है सो बुद्धि वारो जो चाहे वह कर सके है जैसे यह प्रसंग है एक देश में विद्या पढ़ पढ़ के लोग बड़े पंडित भये और उनकी बुद्धि बड़ी प्रबल रही सो आपुस में विचार कियो कि एक राजा के आधीन होय के सब को रहनो उचित नहीं क्यों जो एक मनुष्य की इच्छा में जो भलो बुरो जो आवे सो वाके आज्ञा अनुसार सब को करनो ही पड़े याते सब को भलो होय सो करनो चाहिये एक पुरुष को सर्व अखतियार रहेते जो वाके मन में आवे सो करे दूसरे को भय नहीं सो यह सोच बिचार सब प्रजाको मिलाय राज को प्रबंध सब प्रजा की सम्मत लेके ऐसो बनायो जामें सब को भलो होय और कोई कोई को शत्रू न होय बूरो न माने और सब सुख सो और प्रसन्न रहै या प्रकार सब मिल के राजा को देसतें बाहर कियो और आपुस में परस्पर सब प्रजा मिलके अपनो न्याव आप कर लेते फेर कछु दिन बीते वह देस को राजा दूसरे राजा की सहायता ले सब सैना एकट्ठी कर वह देश पर चढ आयो तब सब विद्यावान मिल के बिचार कियो अपने पास तो कुछ सैना है नहीं जो यासों लड़ाई करें लडनो झगडनो तो मूर्खन को काम है सो अपने तो बुद्धि को बल है सो सब मिल के सैना के आगे जाय बड़े बहादुरी ते लड़ाई में जो हानि है ताको बरनन या प्रकार

करबे लगे के बड़े बड़े सूर वाके हाथ से हरवा और शस्त्र छूट पड़े और कादर होय गये और ए लोग उंचे स्वरते या भांति कहनो प्रारंभ कियो और अनेक प्रकार करके मनुष्य को जामें हानि लाभ है सो सुझायो और अपनी वक्तृता करके एसो शान्त रस छाय दियो कि सब सैना को ठकमूरिसी लग गई और यह कहते चले जायं राजा की फौज सुनते पीछले पांवन ते हटती चलि आवे निदान जब दस कोस पीछे अपने राज में पहुंचे तब राजा और सैना सब को बड़ो आश्चर्य भयो कि ए लोग ने कहा कौतुक कीयो न लड़ाई करी न हरबा चलाये हमको हटाय पाछे अपने देश में कर दिये सो सब उनसो राजी होय जाय मिले और राजाहु अपनी अपराध क्षमा कराय उनके प्रबंध के अनुसार वह देश में रहबे लग्यौ याते कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

बुद्धिर्यस्यबलं तस्यनिर्बुद्धस्यकुतोबलं ।
वनेसिंहोमदोन्मत्तोजंबुकेननिपातितः ॥१॥

अर्थात् जाको बुद्धि है वही बलवान है निर्बुद्धि को बल कहां बन में सिंघ मद करके उनमत्त है तोहु भालु ने वाको गिराय दियो ॥ १ ॥ और बात बात कहबे में भी बड़ी चतुराई को काम है पहिले कोई ते कछु कहनो होय तो यह देख ले जाते मैं कहबे चाह ही ताको इच्छा मोसो बात कहबे की है अथवा मेरी सुनबे की वाके अनुसार बरते और जहां जैसो देखे तहां तैसो करे तब वह कार्य होय तालो की काम तरवार ते नहीं निकले है सब जगे वडप्पन ते

काम नहीं निकले कहुं लघुताई राखे ते काम होत है और जैसे कार्य में मनुष प्रवर्त होय है तैसे ही काम में वाकी बुद्धिहु बढ़े है जो सत्मारग में हैं उनकी बुद्धिहु अलौकिक कहै सो सुबुद्धि कही जात है सो 'सुबुद्धिप्रेरक: कृष्णा:' सुबुद्धि के प्रेरणा करबे वारे भगवान हैं जिनके हृदय में भगवत विराजमान हैं उन्ही की बुद्धि सुबुद्धि अन्यथा कुबुद्धि है ताते हे जीव सदा तू सुबुद्धि राख्यो चाहे तो भगवत की चाहना कर जैसे कह्यो है भगवान ते कहा चाहनो तब भगवानही को चाहनो ॥

॥ दोहा ॥

प्रभुताको सब कोउ चहे प्रभु को चहे न कोय।
व्रज भूषन प्रभु को चहे आजहि प्रभुता होय॥

॥ प्रसंग ४६ कपट भाव और सच्ची प्रीति के विषय में ॥

कपट भाव ते मनुष्य कोई कार्य करनो विचारे तो वह काम सिद्ध नहीं होय अंत में कपटताहु खुल जाय है अथवा कपट ते कोई वस्तु प्राप्त भी होय तो वह ठहरे नहीं और वाको सुख न मिले सो जगत में सब वस्तु के लिये कपट ऐसेही जाननो और जो साचो प्रीति सो करत हैं तो अवश्य वह वस्तु भी मिलत है और वामें वाको सुख उपजे है जैसे भंवरा के प्रीति में कपट है तो सब पुष्पन के पास भटकत फिरे है कहूं वाको ऐसो सुख नहीं मिले जासो स्थिरता होय और पतंग को साचा स्नेह है तो दीपक को देखतेही वाकि तन मय होय जाय है फेर वाते कभी जुदो नहीं होय ॥

॥ दोहा ॥

कपट प्रीत भंवरा करे डार डार रस लेत।
सांची प्रीति पतंग की देखतही जियदेत।
सठसनेह जीरन बसन जतन करत फट जात।
उत्तम प्रीति रेसम लछा सुरभावत उरभात॥
प्रीत घटे नहिं जनम भर उत्तम जनसों लाग।
सौ बरस जल में रहे चकमक तजे न आग॥

चौर चोछेन की प्रीत और बालू की भीत एक क्षण भर भी नहीं स्थिर रहे जैसे यह प्रसंग है। एक मनुष्य कोई सुंदर स्त्री को मारग में देख वाके पीछे लग्यो तब वह स्त्री ने पुछ्यो कि तू मेरे पीछे लग्यो क्यों आवे है तब वह मनुष्य ने कह्यो मैं तेरे ऊपर आसक्त हौं तब वह स्त्री बोली के मेरे ऊपर कहा आसक्त है मेरी बहिन मोहुते अति सुंदर रूपवान है जा वाके ऊपर आसक्त हो। सो वह मनुष्य वाके बहिन के पास गयो देखि तो अति कुरूप है पाछे फेर आय के वा स्त्री सो कह्यो तूं झूठो क्यों बोली तेरी बहिन तो अति कुरूप है तब वह स्त्री ने कह्यौ के तू झूठो कैसे कह्यौ जो मैं तेरे ऊपर आसक्त हौं जो मेरे ऊपर आसक्त होतो तो मोको छोड़ वाके पास काहे जातो ताते तू कपटी है मेरे पास ते चल्योजा जिनको कपट भाव है तिनसों में बात नहीं करूं॥

॥ दोहा ॥

उत्तम मध्यम अधम नर पाहन सिकतापानि।
प्रीति अनुक्रम जानिये बैरव्यतिक्रम जानि॥

अर्थात् उत्तम जन की प्रीत पत्थर की लकीर के समान है मध्यम की प्रीति बालू की लकीर अधम की पानी की लकीर जो करतही मिटि जाय ऐसेही याको उलटो उत्तम को वैर पानी के लकीर समान, मध्यम को बालू की लकीर, अधम को पत्थर की लकीर जो कभी नहीं मिटै। याते दुर्जन सो प्रीत नहीं करे सोही भलो है जैसे कह्यो है ॥

॥ स्लोक ॥

दुर्जनेनसमंसख्यंप्रीतिंचापिनकारयेत्।
उष्णोदहतिचांगारःशीतःकृष्णायतेकरं॥१॥

अर्थात् दुर्जन जो खल तिनसो प्रीति नहीं करनी और मित्रता नहीं राखनी क्यों जो जलतो कोइला जलावे, ठंढो होय पीछे हाथ कारो करे ऐसेही खल सो प्रीति है ॥

॥ स्लोक ॥

परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनं।
वर्जयेत्तादृशंमित्रं विषकुम्भंपयोमुखं॥१॥

अर्थात् जैसे घड़ा के भीतर तो विष भयो है और ऊपर ते गला के पास दूध है ऐसे जो मुख पर तो मीठो बोले है और पीठ पिछाड़ी हान करत है ऐसे मित्र को त्यागही करनो ॥ १ ॥

॥ श्लोक ॥

दुर्जनः प्रियवादीच नैतद्विश्वासकारणं ।
मधुतिष्ठतिजिह्वाग्रेहृदि हालाहलंविषं ॥१॥

अर्थात् जिनकी जिह्वा पर तो मिठास है और हृदय में हलाहल विष है ऐसे प्रिय बोलवे वारे खल जो कपटी सो विश्वास के जोग नहीं ॥ १ ॥ याते स्नेह तो सज्जनही ते कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

स्नेहच्छेदेपिसाधूनां गुणानायान्तिवि क्रियां । भंगेपिहिमृणालानामनुबन्ध न्तितन्तवः ॥ १ ॥

अर्थात् की साधु जो सज्जन उनसों प्रीत टूटवे पर भी उनके गुण ऐसे हैं की दुर्गुण नहीं करें क्यों जो कमल की डांडी टूटे पर भी वाके तागा साथ लगे रहे हैं ॥ १ ॥ तातें कह्यो है ॥

॥ दोहा ॥

प्रीत तो ऐसी कीजिये जैसी करे कपास ।
जीते तन को ढापती मरे न छोड़े साथ ॥१॥

सो सच्चे मन सो जामें प्रीत होय वह अवश्य कभी पर कभीं मिलिहो है जैसे यह प्रसंग है । एक राजा के महल में एक संतरास कछु नकासी को काम बनावत हतो सो एक

दिना राजकन्या को देख्यो तो वापर वाकी प्रीत लग गई सो ऐसो आसक्त भयो के बिना देखे वाको चैन न पड़े कोई पर कोई उपाय सो वाको देख ले तब अन्न खाय नहीं तो भूखो रहे जाय। जब नकासी को काम पूरो हो गयो तब राजा वाकी कारीगरी देख बहुत प्रसन्न भये और संचास ते कह्यौ जो तू मांग सो हम देहींगे तब संचास ने मांग्यो मोकु कछु नहीं चहिये यह राजकन्या मोको दीजिये या बात ते राजा को बड़ो पश्चाताप उत्पन्न भयो कि अब कौन उपाय कीजिये जामें मेरो बचन भी रहे और कन्या भी न देना पड़े यह सोच में रहे तब दीवान प्रधान ने राजा सो कह्यो आप कछु सोच मत करिये याको उपाय हम करेंगे तब राजा के कारबारीन ने संचास को बोलाय के कह्यो फलानो पहाड़ खोदके जो नदी वहां है सो नगर में ले आव तब तोको राजकन्या मिले अर्थात् यह जो न याको तोड़्यौ पहाड़ टूटेगो न नदी यहां आय सकैगो न राजकन्या देनो पड़ेगो परन्तु वह संचास यह बातको सुन अत्यन्त हर्षित होय पहाड़ पर जाय टांकी चलाय २ और मुखते कहत जाय की हे जगदीश्वर जो मेरी प्रीत सांची होय तो यह पहाड़ बेग टूटियो और नदी को मारग दीजियो सो एक टांकी मारे तो बड़ी बड़ी शिला पहाड़ ते टूट २ के नीचे जाय पड़ें सो थोड़ेही दिन में पहाड़ तोड़ नदी के ल्यावे को त्यारी कीयो तब राजा को [illegible] कि वा संचास सो कह्यो तू राज कन्या को क्यों मांगे है यह [illegible] याहु ते सुंदर तोको देंगे तब वाने कहा [illegible] आंखते आप वाको देखिये तब वाकी सुंदरता आप को देख पड़े नहीं तो वाके सुंदरता को

आप कहा जानेंगे और यह आंखन को तो वाही को सौंप्यौ जा बिरीया वाको देख्यो अब यह दूसरे के देखबे को कदापि नहीं फिर सके इतनेमें वह संत्रास के आंखन ते लोहू टपक्यौ सो प्रधान ने कह्यौ यह लोहू कैसे टपक्यौ तब वाने कह्यौ राजकन्या के पांव में कांटा चूभ्यौ ताते लोहू टपक्यो सो प्रधान आय देखे तो राजकन्या फूल बाग में फिर रही हती सो वाके पावन में सांचहु कांटा चूभ्यो हतो फेर पाछे राजा ने समाचार पाये के काल वह संत्रास नदी को नगर में ल्यावेगो और राजकन्या देनी पड़ेगी तब तो बड़ो सोच कर वे लग्यौ इतने में एक लौंडी आयके राजा सो अरज करी आप या बात को सोच मत करीये मैं याको उपाय करूंगी सो वह लौंडी संत्रास के पास जाय के कह्यो अरे संत्रास तू ने कछु समाचार सुने तब वाने कह्यो मैं तो नहीं जानू कहा समाचार है तब लौंडी ने कह्यो अरे जाके लिये तू पहाड़ काट के नदी ल्यायौ है सो तो तेरी प्यारी आज मर गई यह सुनतेही वह हथौड़ा माथे में मार अपने प्राण दे दिये फेर वाही जगे लोगन ने गड़हा खोद वाको धरती के भीतर बैठाय उपर ते गड़हा पाट दियो सो समाचार राजकन्या ने सुन्तेही तुरत सिंगार कर महल ते निकल जा जगे वाने अपने प्राण दिये तहां जाय खड़ी भई और पृथ्वी ते कह्यौ हे पृथ्वी याको मेरी प्रीति सांच होय तो तू फट जाइयो और यासो मोको मिलैयो सो झट पृथ्वी फट गई और वह संत्रास ने अपनो हाथ उंचो कीयो और राजकन्या वाको हाथ पकड़ भीतर जाय वाके साथ पृथ्वी में समाय गई। सो

साचो प्रीत ऐसो है जो मरे पीछे भी दोनों मिले। ताते है जीव लौकिक में जो जिनते सच्ची प्रीत करे है सो मिले है और सर्व पदार्थ उत्पन्न कर्ता और सब के स्वामी और कोटि कंदर्प लावण्य और त्रैलोक के नाथ ऐसे जो अपने प्रभु सो केवल प्रीतही के बस हैं सो कपट भाव छोड़ और सांची प्रीत उनके चरण कमल में लगावे तो कैसे न मिले जो सर्वदा सब भक्तजन को प्रीतिही ते मिले हैं याते प्रीत तो प्रीतम ते और सब विपरीत है और स्वारथ रहित निष्काम प्रीत है वही सर्वोपर है और उनके साथ प्रीतहु जो सर्वोपर है वही प्रीत करनी उचित है अर्थात् निष्काम और गोविंद स्वामी ने पद में गायो है 'प्रीतम प्रीतही ते पैये' ॥

॥ प्रसंग ४७ माया जालते बचबे को उपाय के विषय में ॥

जैसे कोई नदी इत्यादिक में जाल डारि मछलिन को बझावे है और जो मछली जाल डारबे वारे के पांव के निकट रहै सो वह जाल में नहीं फस सके क्यों जो जाल तो दूर फेंको है सो जो दूर होय सो फसि के जाल में बझ जाय है याही प्रकार संसार सागर में भगवान की माया शक्ति रूपी जाल फैल रही है ताते जो जीव भगवत की शरण ले प्रभुन के चरणारविंद के निकट है सो जीव कदापि माया रूपी जाल में नहीं फसे किन्तु जो दूर हैं सोही फसे हैं और भगवान की यह प्रतिज्ञा सर्वत्र प्रसिद्ध है जैसे यह

॥ दोहा ॥

कोटि विप्र बध लागहि जाहू।
आए शरण तजौं नहिं ताहू ॥ १ ॥

सो गीता जी में भगवान की श्री मुखको वाक्य प्रसिद्ध है॥ 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रजेति' याते अष्टाक्षर मंत्र अहर्निस उच्चार करत रहनो जो शरण में मन को ढृता प्राप्त होय ॥ १ ॥ और जैसे सूर्य के सन्मुख रहो तो परछांही अपने पीछे हो जाय और सूर्य के सामने पीठ किये ते परछांही अपने आगे दृष्ट पड़े और मध्यान्हमें सूर्य के नीचे रहो तो परछांही अपने पैरों के तले हो जाय तैसे भगवत सो सन्मुख रहो तो माया पीछे हो जाय और भगवत की ओर पीठ करी तो केवल मायाही देख पड़े और शरण में रहो तो माया अपने पैरों तले हो जाय ॥

॥ प्रसंग ४८ निर्वाह को उद्योग के विष्यय में॥

मनुष्य के निर्वाह के हेतु अन्न जल वस्त्र पात्र रहवे को स्थान इत्यादिक वस्तु आवश्यक हैं विना याके मनुष्य को निर्वाह नहीं होय सके और अपने आत्मा को दुखित न करके सर्व प्रकार आत्मा की रक्षा करनीही उचित है क्यों जो आत्माही के संयोग करके लौकिक अलौकिक सब कार्य बन सके हैं याते कह्यो है ॥

॥ श्लोक ॥

आपदर्थेधनंरक्षेत् दारान्रक्षेद्धनैरपि।
आत्मानं सततं रक्षेद्दारैरपि धनैरपि ॥१॥

अर्थात् आपदा के लिये धन की रक्षा करनी और धनते स्त्री की रक्षा करनी और आत्मा की धन स्त्री सब ते रक्षा करनी ॥

॥ श्लोक ॥

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्। ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवींत्यजेत् ॥ १ ॥

अर्थात् कुल के लिये एक को त्याग करनो और गाम के लिये कुल को त्याग करनो और देश के लिये गाम को त्यागनो और आत्मा के लिये पृथ्वी त्याग देनी ॥ १ ॥ और आत्माही करके देह को संबंध पाय भगवद्भक्ति को आराधना अच्छी भांति कर सके है याते आत्मा को प्रसन्न और संतुष्ट राखनो और जीविका के निमित्त उद्यम करि निर्वाह बहुधा जो लोग अपनो प्राक्रम चलाय अपनो भरण पोषण आप नहीं करें अपने कुटुम्बी अथवा मित्र के माथे जाय पड़े है सो वह पुरुषार्थ हीन और अभागी और निठल्लु मनुष कहे जात हैं सो मनुष्य को सर्वथा उचित है कि अपनो कार्य आप अपने सामर्थ्यानुसार करे अपने बल प्राक्रम होते दूसरे को भरोसा न राखे के कोई खवाय देगो तब खायेगें कपड़ा पहिरावेगो तब पहिरेंगे पशु पक्षि भी फिर डोल अपनो चारा ढूंढ लेत हैं और कोई ते कोई वस्तु मांगनो भी निर्लज्जता

और लघुताई को काम है तामें पेट भरबे के लिये मांगनो और मांग २ के निर्वाह करनो वही भीखमंगता कह्यो जाय है याते कह्यो है सबते लघु है मांगनो और मांगनो भलो न बाप ते याते भगवत ने जैसे सामर्थ दियो होय वैसो उद्यम करे खेती है बनिज वैपार है अथवा कोई की चाकरी नोकरी है यही सब जीवकाते लौकिक अलौकिक दोऊ जगे मनुष्य सुखी होत है और चोरी ठगाई लूट इत्यादिक कर के जो पेट भरे है उनको लोक परलोक दोहु जगे में दुखही प्राप्त है और येहु जाने रहनो के द्रव्य अर्थात् रुपया जो है सो मनुष्य के निज निर्वाह के विनियोग में नहीं। रुपया को कोई खाय पेट नहीं भर सके अथवा पहिर के तन नहीं ढाप सके यह सब वस्तु को बदला है जैसे एक मनुष्य अपने अर्थ अनाज उत्पन्न करे और वस्त्र भी बनावे और पात्र भी गढ़ सके घर भी उठावे इत्यादिक सब कार्य एकही मनुष्य ते नहीं बने सो जाने अन्न उत्पन्न कियो वाके खावे ते अधिक अन्न बढो वाको दुसरो जो मनुष्य कपड़ा अथवा पात्र गढ़े है वाको अन्न को काम पड़ो तो वाको वस्तु अपने काम की जो है सो ले और अन्न बेच वाके बदला को रुपया वाको दियो सो वाको जो वस्तु की इच्छा भई सो बदला को रुपया दे वह वस्तु लीनी ऐसेही एक एक के श्रम के बदला में रुपया दे अपनी आवश्यक वस्तु ले परस्पर निर्वाह करे है कोई रुपया को संग्रह करि वाके व्याज को बढाय अपनी कालक्षेपना करे है जो लोग कोई को विद्या सिखावे हैं वाके बदला में वाके सिष्य द्रव्य देत हैं उनको अध्यापक और सिक्षक वृति कही जाय है जो सद्धर्म को उपदेश कर सत्मारग में प्रवर्त

करे हैं वाके बदले उनके सेवक सिष्य उनकी सेवा टहल कर द्रव्यादिक देत हैं सो वे गुरु वृति राखे हैं। जो भगवान के ही भजन में सदा रहत हैं लोग धर्मार्थ उनको द्रव्य देत हैं उनकी साधु वृत्ति और आकाश वृति कही जाय है या प्रकार जगत में सब को निर्वाह होत है सो अपने निर्वाह अर्थ उद्योग यहां ताईं करनो जहां ताईं पार लौकिक कार्य में हानि न पड़े सो संतोष वृत्ति सात्विक वृत्ति है और निश्चे जान रखनो चाहिये कि सब के पालन कर्ता भगवानही हैं जीविका के लिये जो उद्यम है वामें मनुष्य को निमित्त कारण है मनुष्य के जन्म के पहिले ही वाके माता के तन में भगवत दुध को उत्पन्न करत हैं फेर जन्म देत हैं सो बालक को एतनोही करनो रहे है के स्तन में मुख लगाय दूध को खेंच पेट में घोट जानो याही प्रकार जीविका देवे वारे भगवान ही हैं मनुष्य को उद्यम करनो निमित्त मात्र है जैसे कह्यो ॥

॥ दोहा ॥

जब दांत न थे तब दूध दियो
जब दांत दिये तब अन्न जो देहै।
जल में थल में पशु पंछीन की
सुधि लेत सो तेरी भी ले है॥

॥ श्लोक ॥

वृत्यर्थं नातिचेष्टेतसाविधात्रैवनिर्मिता।
गर्भादुत्पतितेजन्तोमातुः प्रस्रवतःस्तनौ॥

अर्थात् जीविका के लिये बहुत चेष्टा न करनी चाहिये क्यौं जो वाको भगवतनेही बनाय राख्यौ है जन्तु को जन्म होतेही माता को स्तन श्रवे है ॥ १ ॥ याते अपने प्रभुको ही पालन कर्ता जानि भरोसा राखनो या बात को सोच नहीं करनो ॥

॥ प्रसंग ४८ सच्चीचाकरी के विषय में ॥

एक राजा को कामदार राजा की चाकरी त्याग भगवत सेवा भजन में प्रवर्त भयो तब राजा ने लोगन ते पुछ्यौ जो अमुको अब राज को कार्य करनो काहे छोड़ि दियो तब लोगन ने कह्यो जो अब वह भगवान की सेवा चाकरी में लग्यौ रहे है तब राजा आप वाके घर जाय बाते पुछ्यौ तू मेरो काम करनो काहे छोड्यौ तब वह कामदार ने कह्यौ जो मैं पांच बात सोच के तुम्हारी चाकरी करनो छोड़ दियो (१) एक तुम राजगद्दी पर बैठो हौ तो मोको तुम्हारी चाकरी में हाथ बांधे साम्हने ठाड़ोही रहनो पड़े है और जो तुम कहो सोही मोको अवश्य करनोई पड़े और वह प्रभु को मेरो एसो है जो आप गाद्दी पर खड़े रहें और उनके आगे मैं बैठकेहु सेवा करूं तो वह मान ले हैं और मेरे सामर्थ्यानुसार जो करूं अथवा थोड़ी भी सेवा करूं उतनेई में प्रसन्न हो जाय हैं विशेष करवे के लिये क्रोधित नहीं होंय (२) दुसरे तुम भोजन करो हो और मैं बैठ्यौ मूह देख्यौ करूंहु और वह प्रभु मेरो एसो है जो मेरे जन्म के पहिले मेरे लिये माता के अस्तन में दूध पठाय दियो है और वाकी चाकरी भी न करूं तोहु खायवे को दे (३) तीसरे यह जो तुम सूतो हौ तब मोकों जागि तुम्हारी रखवाली करनी पड़े है और वह प्रभु

ऐसो है जब मैं सोवत हूं तोहु मेरी रक्षा करे है (४) चौथे यह कि तुम्हारो एक अपराध मोते बने तो तुम दंड देत हो और वह प्रभु मेरो एसो है कि दिन रात में अनेकन अपराध बन जाय हैं तोहु वह क्षमाही करत है (५) पांचवे यह जो तुम मोको जो काम को अधिकार दियो है तामें लोग ईर्षा कर तुम्हारे मरे पीछे सब मोते शत्रुता करेंहीगे और वह प्रभु मेरे सदा सर्वदा सब काल में विराजमानहो रहत है जहां काल कोहु गम नहीं। ताते जीव को अपने प्रभुन की सेवा टहल में मन राखनो जो सब को महाराजाधिराज राजेश्वर हैं जाके साधे सब सधे एही सच्ची चाकरी है॥

॥ प्रसंग ५० धन के घमंडिन के विषय में॥

धन के घमंडी धनांध होय अपने आगे दूसरे मनुष्य के गुण को पहिचाने नहीं वे अपने मन में समझ लेत है कि मेरे बरोबर जगत में कोई नहीं सब ते बड़ो मही हूं या अहंकार ते दुष्कर्म करवे में भी प्रवर्त होय जाय हैं और उनमत्तता के कारण उनकी सुबुद्धि को तिरो भाव हो जाय है सो एकादशस्कंध श्री भागवत में नलकूबर आदिक के प्रसंग में नारद जी ने धनवान लोगन की निंदा करी है और धनादिक जो है सो भगवत की माया शक्ति है जाको मन यामें फस्यो रहे है वाको मन भगवत की ओर नहीं लगे माया जो है वही भगवत प्राप्ति में आवर्ण करत है जैसे यह।

॥ दोहा ॥

दूर भजत प्रभु पीठ दे गुण पसारत काल।
प्रगटत निर्गुण निकटरहि चंगरंग भूपाल।

अर्थात् जैसे पतंग की जितनी डोर मिले वितनी दूर डोर देवे वारे की ओरते पीठ करके भागि जाय है ऐसेही राजा को धन ऐश्वर्ज के मिलते भगवान तें दूर होत जाय है और जब पतंग उडावे वारो अपनी डोरी खैंच ले है तब पतंग वाके पैर के पास आवे है तैसे राजा और धनवानको ऐश्वर्ज प्रभु खैंच लेता हैं तब वह भगवत के निकट आवे है याते गीता जी और श्री भागवत दसम में भगवान के वाक्य हैं। 'यस्यानुग्रहमिच्छामि तस्य सर्वं हाराम्यहं' अर्थात जापर में अनुग्रह विचारो हौं वाको सर्वस्व हर लेत हौं। और धन कि संग्रह करवे वारे के चित्त को कबहु स्वास्थता नहीं, सर्वदा उनको धन के प्रयत्नही की चिन्ता में जन्म बिते है सुख सो निद्राहु नहीं पड़े राजभय चोरभय उनके माथे सवार रहत वे जैसे ॥

॥ श्लोक ॥

राजतःसलिलादग्नेश्चौरतःस्वजनादपि ।
भयमर्थवतांनित्यंमृत्योःप्राणभृतामिव ॥१॥

॥ दोहा ॥

बहुत द्रव्य संचय जहां चोर राजभय होय।
कांसे उपर बीजुरी परत कहत सब कोय॥

याते धन पाये और कमाये को लाभ यही है जो याको बहुत संचय न करे किन्तु स्वारथ करे क्यौं जो लक्ष्मी चंचल है धूप की छाया के समान कभी एक जगह नहीं स्थिर रहे याके जावे को तीन मारग है दान भोग और नाश सो जो

दान अथवा भोग नहीं करे उनको धन कोई प्रकार विनाश ही होय है याते कह्यो है ॥

॥ दोहा ॥

पानी बढो नाव में घर में बाढ्यो दाम ।
दोऊ हाथ उलीचिये यही सयानो काम ॥

राजा भोज के प्रधान ने कह्यो । 'आपदार्थेधनंरक्षेत्' आपत काल के लिये धन राख । तब भोजने कह्यो । श्रीमताम् कुतो आपदा' । लक्ष्मीवान को आपदा कहां । प्रधान बोल्यो । 'कदाचित् कुपितो दैवः । कभी दैव को कोप होय । तब भोज ने कह्यो । 'ततः सर्वं विनश्यति' । तब सभी धन नाश होयगो अर्थात जब भगवानही कोप करेंगे तब कहा मनुष्य को राख्यौ रहे सके है । सो धन को आवत जात कोई जाने नहीं है

॥ श्लोक ॥

समायाति यदा लक्ष्मीर्नारिकेलफलाम्बुवत् । विनिर्याति यदालक्ष्मीः गज भुक्तकपित्थवत् ॥ १ ॥

अर्थात् जैसे नारियल में पानी न जानिये कहां ते आय जाय है और हाथी जो कईथ खाय है सो वाके पेटते समुचो निकले है पर फोडो तो वामे गुद्दा नहि निकसे जाने कहां चल्यौ जाय है तैसे लच्मी है । और धन पाय के मनुष्य को अपनी प्रकृतिहु न बदलनी चाहिये क्यौं जो धन न रह्यो तो फेर निर्वाह कठिन पड़े है दुखही भोगनो पडे है ॥

॥ दोहा ॥

धन बाढे मन बढ गयो नाहिन मन घट होय।
जो जल संग बढे जलज जल घट घटै न सोय॥

जो सरल सुभाव राखे है सो जगत में सुखी होत है और धन पर घमंड करनो बड़े मूर्खन को काम है जैसे कोई धनवान बहुत गहना ते लदो हाथी पर बैठ्यो चल्यो जात रह्यो और अपने मन में फूल रह्यो जो ईश्वर ने मेरेही लिये सब पदार्थ बनायो है इतने में एक माखी आय वाके मस्तक पर बैठी और कह्यो कि तेरीहु कहा बिसात है देख भगवान ने सब वैभव तेरे लिये बनायो और तोको मेरे लिये के तेरी भी माथे ऊपर बैठी चलत हौं तू अपने मन मे कहा फूलत है यौं कह्यो ॥

॥ दोहा ॥

कली भली दिन चार की जबलो फूली नहीं।
देत डारते डार फूली सहत न फूल की॥

सो जगत में प्रभु ने कोई को विद्या कोई को धन कोई को बल कोई को रुपया इत्यादिक पदार्थ दियो है सब अपने २ ठिकाने काम के है और सर्व सामर्थ तो कोई में भी नहीं एक जिनको भगवत को बल है वही सर्व सामर्थवान है तो फेर धन को घमंड कौन काम को ॥

॥ दोहा ॥

घनेबाज गजराजहैं सुख के सबै समाज।
बने ठने किहि काज के ज्यो न हेत ब्रजराज॥

॥ प्रसंग ५१ जगत और परलोक क...

जगत और परलोक को नातो सौत ... सो है ... ते मन लगावे तो दूसरी रूठेगी । और पूर्व पश्चिम के ... समानहू है जितनो एक के निकट रहेगो वितनोही ... ते दूर होयगो और दिन के समानहु है रात है तो दिन ... दिन है तो रात नहीं ऐसे ही संसार में मन होय तो भ... में नहीं लगे और ॥

॥ श्लोक ॥

पृष्ठतः सेवयेदर्कं जठरेण हुताशनं ।
स्वामिनं सर्वभावेन परलोकममायया ॥१॥

अर्थात् पीठते सूर्य को पेटते अग्नि को सर्व प्रकार ते स्वामी को और माया रहित होय परलोक को सेवन करनो ॥

॥ दोहा ॥

नहिं विद्या नहिं चतुरता बाल बुद्धि
अज्ञान । मेरी चूक सुधारिके देह
हु सुमति सुजान ॥

दासानुदास
ब्रजजीवनदास
फाटक रंगीलदास
बनारस